श्रीमती सरोजिनी नायडू

HINDUSTANI ACADEMY
Hindi Section
Library Ac. 1768
Date of Receipt 12/12/28

प्रकाश पुस्तकालय, कानपुर.

दादाभाई नौरोजी

चरित भूषण सम मनोहर दूसरा भूषण नहीं।
सामने आदर्श रखकर देखले कोई कहीं॥

उक्त महामान्य का यह जीवन-चरित्र है। इसमें उनके देशहित-कर सम्बन्धी समस्त कार्यों का वर्णन है। दादाभाई हमारे राष्ट्रीय जीवन के जन्मदाता थे। हमारी राष्ट्रीय महासभा का जन्म इन्हीं के द्वारा हुआ था। देश के नव-युवकों के लिए आपका जीवन आदर्श है। मूल्य ढाई आना।

रानाडे की जीवनी

आदर्श रूप महात्मा रानाडे का यह जीवन-चरित्र है। साथही उनके व्याख्यानों और देशहित के कार्यों का दिग्दर्शन किया गया है। समाज सुधारक नवयुवकों के लिए यह आदर्श रूप है।

मूल्य ढाई आना।

प्रकाश पुस्तकालय, कानपुर

प्रकाश पुस्तकमाला की ३१ वीं पुस्तक।

श्रीमती सरोजिनी नायडू

लेखक—श्रीयुत मातासेवक पाठक।

श्रीमती सरोजिनी देवी।

प्रकाशक—
शिवनारायण मिश्र 'भिषग्रत्न'
प्रकाश पुस्तकालय, कानपुर.

प्रथम संस्करण २०००] [मूल्य ।=) छः आना

श्रीमती सरोजिनी नायडू।

श्रीमती सरोजिनी नायडू

"'तुम हमारी संरक्षता में रहकर हमें सिखाने क्यों नहीं देते कि तुम्हारे देश की शासनव्यवस्था किस प्रकार होनी चाहिये ? हमें क्यों नहीं धीरे धीरे ही शासन का अधिकार अपने हाथ से छोड़कर तुम्हें सौंपने देते ?'—यही कपटपूर्ण बात है जिसने हमारे कितने ही उच्चकोटि के पुरुषों के हृदयों में यह मिथ्या धारणा पैदा कर दी है कि हमें स्वतंत्रता का पाठ पढ़ाया जा रहा है। परन्तु स्मरण रखना चाहिये कि स्वतंत्रता की शिक्षा दूसरों के द्वारा नहीं मिलती। इसका विचार तो स्वयमेव अपने ही भीतर उत्पन्न होता है। एक देशका दूसरे देशपर शासन करना धर्म विरुद्ध है।"

यह निर्भयतापूर्ण कथन उन श्रीमती सरोजिनी नायडू का है जिनका अब तक का जीवनचरित्र हम लिखने चले हैं। श्रीमतीजीने सन् १९२२ ई० के प्रारम्भ में मंगलोर में होनेवाली पहली कर्नाटक प्रादेशिक कानफरेंस की सभानेत्री की हैसियत से दिये हुए भाषण में ये खरी बातें उस समय कही थीं जब कि देशभर में नौकरशाही की राक्षसी दमन नीति का चक्र बड़ी तेज़ी से चल रहा था और देश के अनेक नेता जेलों में सड़ाये जा रहे थे तथा स्वयं महात्मा गाँधी को गिरफ़्तार करने की तैयारियाँ हो रही थीं। अन्य किसी देश के लिये चाहे यह बात नयी ही क्यों न हो, किन्तु पुण्यभूमि भारत में

तो अनादि काल से राजाओं के राक्षसी अत्याचारों का अन्त भारत की देवियों द्वारा होता रहा है। जिस समय राजा का अन्याय और अत्याचार अपनी सीमा पार कर जाता है और प्रजा की जान और माल तथा धर्म पर आघात पहुँचता है, उसी समय भारत की देवियां सामने आती हैं और अन्यायों तथा अत्याचारों का अन्त करने में सहायक होती हैं। यहाँ तक कि हाथ में कृपाण लेकर अत्याचारों का नाश करने में भी प्रवृत्त हुई हैं। हम भारतीयों को इस बात का गर्व है कि हमारे इतिहास ऐसी देवियों के चरित्र से भरे पड़े हैं। भारत के इन गिरे दिनों में भी यहाँ ऐसी देवियों की कमी नहीं है जो स्वतंत्रता की लड़ाई वीरतापूर्वक लड़ रही हैं। इन्हीं में से अग्रगण्य श्रीमती सरोजिनी देवी हैं।

जन्म।

श्रीमती सरोजिनी देवी का जन्म सन् १८७९ ई० की १३ वीं फरवरी को दक्षिण हैदराबाद में हुआ था। इनके पिता डाक्टर अघोरनाथ चट्टोपाध्याय एक प्रतिष्ठित ब्राह्मण-कुल के थे। वे एक उच्च कोटि के वैज्ञानिक और पण्डित थे। सन् १८७७ ई० में डा० अघोरनाथ जी ने एडिनबरा युनिवर्सिटी से डाक्टर आफ साइंस की उपाधि प्राप्त की थी। पीछे कुछ दिनों तक बोन में भी अध्ययन किया था। जब विज्ञान (साइंस) की शिक्षा में पाण्डित्य लाभकर डा० अघोरनाथ विलायत से स्वदेश लौटे तब उन्हों ने दक्षिण हैदराबाद में निज़ाम-कालेज की स्थापना की और तब से जीवनपर्यन्त शिक्षा के ही कार्य में लगे रहे। उनके सम्बन्ध में स्वयं श्रीमती सरोजिनी देवी ने अब से कुछ काल पहले लिखा था

कि, "मेरे पुरखा हज़ारों वर्ष से वन और पहाड़ी गुफाओं के प्रेमी, बड़ी बड़ी कल्पनाएं करनेवाले, पण्डित और तप परायण होते आये हैं। स्वयं मेरे पिता भी असम्भव कल्पनाएं करने में एक ही हैं जिस से अपने जीवन में उन्हें सफलता नहीं प्राप्त हुई है। मेरे विचार में तो भारत भर में थोड़े ही लोग विद्वत्ता में इनकी टक्कर के निकलेंगे। इनसे अधिक जनप्रिय तो मेरी समझ से कम ही मिलेंगे। इनकी दाढ़ी के बाल बहुत लम्बे और सफेद हैं और हँसने में तो इनकी जोड़ का शायद ही कोई निकले। इन्हों ने अपना कुल धन दो मुख्य उद्देश्यों को पूर्ति में ख़र्च कर डाला—एक तो दूसरों की सहायता करने में और दूसरे कीमियाँगरी के पीछे।"

डा० अघोरनाथ चट्टोपाध्याय की मृत्यु अभी सन् १९२१ ई० में ही हुई है, इसलिये उनके सम्बन्ध की बातें जानने वाले बहुत से लोग विद्यमान हैं। इन पंक्तियों के लेखकने उन से प्रत्यक्ष परिचय रखनेवाले एक सज्जन से सुना है और स्वयं श्रीमती सरोजिनी देवी के लेख से भी प्रकट है कि डा० अघोरनाथ कीमियाँगरी के पीछे पागल से हो रहे थे। उनका पूर्ण विश्वास था कि कीमियाँगरी या सोना बनाने की विद्या केवल कल्पना ही कल्पना नहीं है, बल्कि रासायनिक क्रियाओं द्वारा सोना बनाया जा सकता है। भारतीय रसायन शास्त्र में तो सोना बनाने की अनेक युक्तियां लिखी हुई हैं। फिर अमुक साधू ने जड़ी बूटी की सहायता से तांबे का सोना बना डाला या अमुक योगी ने अपनी विभूति द्वारा बहुत सा सोना बना दिया, इस तरह की दन्तकथाएं इतनी अधिक प्रचलित हैं कि कितने ही लोग श्रीमती सरोजिनी देवी की तरह इस कीमियाँगरी या सोना बनाने की विद्या

को केवल कवि की कल्पना ही मानकर सन्तोष नहीं कर सकते। ऐसे ही लोगों में डा० अघोरनाथ चट्टोपाध्याय मुख्य थे क्योंकि विज्ञान की इतनी उच्च शिक्षा पाने पर भी उनका इस विद्या में पूरा विश्वास था। इसकी सिद्धि के लिये उन्हों ने अपना सारा धन फूंक डाला था। डा० अघोरनाथ का इस विद्या में इतना अधिक विश्वास था कि जो कोई उनके पास पहुंच जाता और यह कह देता कि सोना बनाने की एक विधि मुझे मालूम है, तो वे अपने सहोदर भ्राता की तरह उसका सम्मान करते और उसे सोना बनाने के काम में तुरन्त लगा देते थे। चालीस वर्ष से अधिक उन्होंने इस ओर अपना तन मन धन सब कुछ लगा दिया, किन्तु एक भी युक्ति सिद्ध न हो सकी। उनके हज़ारों लाखों रुपये खर्च कर डालने और अपना प्रायः कुल जीवन इसी कीमियाँगरी की सिद्धि में लगा देने के पीछे भी सफलमनोरथ न होने पर यदि श्रीमती सरोजिनी देवी इस कीमियाँगरी को 'कवि की कल्पना' और अपने पिता डा० अघोरनाथ के जीवन को 'दैदीप्यमान असिद्धि' कहें तो क्या अनुचित है?

शिक्षा और विवाह।

श्रीमती सरोजिनी देवी अपने पिता की सर्व-प्रथम सन्तान थीं, इसलिये स्वभावतः डा० अघोरनाथ जैसे उच्चशिक्षा-प्राप्त-व्यक्ति ने उनकी शिक्षा की ओर विशेष ध्यान दिया। यह उन्हीं की शिक्षा-दीक्षा का प्रभाव था जिससे उनकी प्रिय पुत्री सरोजिनी अभी पूरे बारह वर्ष की भी नहीं हो पायी थी कि उसने मद्रास युनिवर्सिटी की मैट्रिक्युलेशन परीक्षा पास कर ली। इतनी अल्प अवस्था में ही यह परीक्षा पास कर लेने

के कारण सरोजिनी की ख्याति उसी समय भारत भर में फैल गयी। परन्तु डा० अघोरनाथ को इतने ही से सन्तोष नहीं हुआ और उन्हों ने अपनी प्रिय पुत्री को उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिये सन् १८९५ ई० में विलायत भेज दिया। इंगलैंड में श्रीमती सरोजिनी देवी तीन वर्ष तक रहीं। वहां पहले तो लण्डन के किंग्स कालेज में और पीछे गिर्टन में पढ़ती रहीं। इतने ही में उनका स्वास्थ्य बिगड़ गया जिससे उन्हें कालेज छोड़ देना पड़ा और स्वास्थ्य सुधारने के लिये इटाली जाना पड़ा। कुछ दिनों वहाँ रहकर १८९८ ई० के सितम्बर मास में वे अपने जन्मस्थान हैदराबाद लौट आयीं। उसी साल के दिसम्बर महीने में उन्होंने अपना विवाह डा० यम० जी० नायडू के साथ कर लिया, यद्यपि वे अन्य जाति के थे। उन्नीस वर्ष की अवस्था हो जाने तथा उक्त शिक्षा प्राप्त कर लेने के पश्चात विवाह करने से जहां श्रीमती सरोजिनी देवी ने भारत में प्रचलित नाशकारिणी बाल-विवाह की कुप्रथा तथा 'स्त्री शूद्रो न धीयताम्' की घातक उक्ति का समुचित तिरस्कार किया, वहां एक भिन्न जाति के पुरुष के साथ विवाह कर के अपनी स्वातंत्र्य-प्रियता का भी खासा परिचय दे दिया। सामाजिक बन्धनों का इस तरह तिरस्कार करनेवाली श्रीमती सरोजिनी नायडू यदि आज देश के समाज-सुधार के आन्दोलनों में प्रमुख भाग लेती हैं और देशोद्धार के कार्य में निर्भयतापूर्वक लगी हुई हैं तो इसमें आश्चर्य ही क्या है?

कवित्व शक्ति।

यद्यपि श्रीमती सरोजिनी नायडू आज देश के राजनी-

तिक आन्दोलन के कारण ही भारत भर में विख्यात हो रही हैं और यह भी ठीक है कि यदि इस आन्दोलन में इतना न पड़ी होतीं तो कदाचित उनकी ख्याति इतनी अधिक देश-व्यापी न होती। कारण, सामाजिक रूढ़ियों को तोड़ नये सुधारों की अवस्था समय समय पर जैसी सब देशों में रही है वैसी ही आज तक यहां भी है। और समाज-सुधार का क्षेत्र तो मुख्यतः शिक्षित समुदाय तक ही परिमित रहा है। हां, जब से अस्पृश्यों और अछूतों का उद्धार महात्मा गांधी ने कांग्रेस के असहयोग आन्दोलन का एक आवश्यक अंग निश्चित किया है तब से अवश्य ही समाज-सुधार की चर्चा देश के अपढ़ भाइयों तक भी फैल गयी है और देशवासी मात्र का अनुराग इस आवश्यक कार्य की ओर पैदा हो गया है। इसी से हम कहते हैं कि यदि श्रीमती सरोजिनी नायडू केवल समाज-सुधार के ही काम में पड़ी होतीं तो मुख्यतः शिक्षित मण्डली के भीतर ही ख्याति पातीं। परन्तु इतना होने पर और यह देखते तथा जानते हुए भी कि ये राजनीतिक आन्दोलनों में इतना अधिक भाग ले रही हैं, यह निःसङ्कोच कहा जा सकता है कि ये जितनी कवि हैं उतनी राजनीतिज्ञ नहीं हैं। कविता-कानन में इनका प्रवेश किस प्रकार और कब हुआ इस सम्बन्ध में वे स्वयं लिखती हैं—

"मैं यद्यपि अति बाल्यावस्थामें ही बड़ी कल्पनाशील प्रकृति की थी, परन्तु मैं नहीं समझती कि उस बचपन में कविता लिखने की मेरी कोई प्रबल उत्कण्ठा थी। मेरे पिता ने अपनी देख रेख में मुझे एकदम वैज्ञानिक ढंग की शिक्षा दिलायी थी उनकी दृढ़ इच्छा थी कि मैं या तो गणितज्ञ बनूं या विज्ञान-विद्। परन्तु मेरे भीतर कविता की जो स्वाभाविक बुद्धि मेरे

पिता और माता की कवित्वशक्ति के कारण जन्म से ही विद्यमान थी उसने ज़ोर मारा। ग्यारह वर्ष की अवस्था में एक दिन मैं बीजगणित का एक सवाल हल करने में लगी हुई थी और बहुत प्रयत्न करने पर भी वह ठीक नहीं निकलता था, एकाएक पूरी एक कविता ही मेरे हृदय में उपस्थित हो गयी और मैंने उसे लिख लिया। उसी दिन से मेरी कविता का श्रीगणेश होता है। तेरह वर्ष की अवस्था में छे दिनों में मैंने तेरह सौ पद्यों की 'लेडी आफ़ दी लेक' नाम की कविता लिख डाली। उसी अवस्था में मैं बीमार पड़ गयी और डाक्टर ने मुझे बहुत ज़्यादा बीमार बताकर मुझे पुस्तक छूने तक की मनाही कर रखी थी। लेकिन उस बीमारी की दशा में ही मैंने दो हज़ार पंक्तियों का एक नाटक लिख डाला। जिस समय उसे लिखने बैठी उसके पहले उसके भाव मेरे हृदय में नहीं पैदा हुए थे। इसका कुफल जो होना था सो हुआ और उसी समय से मेरा स्वास्थ्य ऐसा बिगड़ा जो फिर कभी ठीक से नहीं सुधरा। मेरी नियमित शिक्षा तो बन्द हो गयी लेकिन मैं रात दिन किताबें ही पढ़ती रहती थी। मैं समझती हूं कि मैंने पुस्तकों का इतना अधिक जो स्वाध्याय किया है इसका अधिकांश चौदह और सोलह वर्ष की अवस्था के भीतर ही हुआ है। मैंने एकउपन्यास लिखा और समाचार पत्रों में बड़े मोटे मोटे पोथे लिख डाले। उन दिनों मैं बड़े गम्भीर भाव से लिखने के काम में व्यस्त थी।"

श्रीमती सरोजिनी देवी के इस कथन से कई बातें एकदम सामने आ जाती हैं। सब से पहले तो इससे यह पता चल जाता है कि इनके भीतर कवित्वशक्ति नैसर्गिक थी और

होती भी क्यों न जब कि स्वयं इनके पिता और माता के हृदयों में भी कल्पना और भावों की प्रबल तरंगें ज़ोर मार रही थीं। स्वयं इनकी माता ने भी अपनी चढ़ती उमर में बंगला के कई मधुर गाने लिखे थे। बीजगणित का सवाल हल करते करते एक पूरी कविता का भाव हृदय में उपस्थित हो जाना सिद्ध कर रहा है कि सरोजिनी देवी जन्म से ही कवि थीं, कविता सीखकर कवि नहीं बनीं। इसी से इन की कविताएं अत्यन्त भाव-पूर्ण होती हैं और कितने ही अंगरेज़ों ने भी मुक्तकण्ठ से उनकी प्रशंसा की है। जैसा प्रायः देखने में आता है कविता की ओर मनका बहुत अधिक झुकाव होने के कारण श्रीमती सरोजिनी देवी की नियमित शिक्षा बन्द हो गयी और इन्होंने कई एक काव्य-ग्रन्थ लिख डाले।

श्रीमती सरोजिनी की कविता।

'जैसी संगति तैसी बुद्धि' की लोकोक्ति इस अंश में श्रीमती सरोजिनी देवी के सम्बन्ध में भी अक्षरसः ठीक सिद्ध होती है। बहुत करके इनको बाल्यावस्था से ही अंगरेज़ी-बोलनेवालों की मंडली में रहकर विद्याध्ययन करना पड़ा और पन्द्रह वर्ष की अवस्था में विलायत जाना पड़ा, इस-लिये अंगरेज़ी चाल-ढाल रहन-सहन का पूरा प्रभाव इनके बाहरी और भीतरी जीवन पर पड़े बिना नहीं रह सका। इनकी कविता की नैसर्गिक प्रतिभा का परिचय तो लोगों को इनकी बाल्यावस्था से ही मिल गया था, परन्तु इन्होंने अंग-रेज़ी शिक्षा पाने के साथ ही अपनी कवित्व की रुचि भी अंगरेज़ी बना डाली जिससे कवि–सरोजिनी के मुख्य

काव्य 'गोल्डेन थ्रेशोल्ड', 'बर्ड आफ टाइम' और 'ब्रोकेन विंग' अंगरेज़ी भाषा में ही दिखाई पड़ते हैं। इतना ही नहीं कि सरोजिनी देवी अंगरेज़ी में कविता लिखती थीं, बल्कि साथ ही उन कविताओं के भीतर विदेशी भाव भी भरे रहते थे और प्रारम्भिक कविताओं में भारतीयता की गंध भी नहीं मिलती थी। सच पूछिये तो उन दिनों में सरोजिनी देवी अंगरेज़ी शिक्षा तथा अंगरेज़ों के देश में रहने के कारण एकदम पश्चिमी सभ्यता की लहर में बह चली थीं। कवित्व की उनकी नैसर्गिक प्रतिभा और रुचि ने बहुत कर के इसी कारण १८९८ ई० में स्वास्थ्य बिगड़ने के समय उन्हें प्राकृतिक सौंदर्य से भरे-पुरे देश इटाली की यात्रा करने की प्रेरणा की और वहां के प्राकृतिक सौंदर्य-पूर्ण दृश्यों के भीतर स्वभावतः उन्हें बड़ा आनन्द प्राप्त हुआ। हम देखते हैं कि जब कभी श्रीमती सरोजिनी देवी का स्वास्थ्य बिगड़ता है तभी वे इटाली की यात्रा करती हैं और हमारा ख़्याल है कि अब तक इस उद्देश्य से वे अनेक बार इटाली जा चुकी हैं। ये भारत की पवित्र भूमि पर एक ऐसे भारतीय के घर जन्मी हैं जिस के भारतीय भावों से पूर्ण होने के बारे में सन्देह ही नहीं किया जाता। पन्द्रह सोलह वर्ष की अवस्था में स्त्रियां युवा अवस्था को पहुंच जाती हैं, यह साधारणतः देखा जाता है। इतनी अवस्था तक श्रीमती सरोजिनी देवी को भारत में ही रहकर शिक्षा प्राप्त करनी पड़ी थी। ऐसी दशा में यह मान लेने को तो जी चाहता नहीं कि इटाली या अन्य किसी देश में जाने ही से श्रीमती सरोजिनी का बिगड़ा हुआ स्वास्थ्य सुधर सकता है, भारत के जलवायु और औषधि से उस का सुधार हो ही नहीं सकता। परन्तु

तो भी अनेक बार स्वास्थ्य सुधारने के लिये इटाली जाना उन को अस्वाभाविक नहीं जचता। एक तो उन की शिक्षा-दीक्षा बचपन से ही अंगरेज़ी में होने से उस ओर की प्रवृत्ति बढ़ना स्वाभाविक है। परन्तु जैसा ऊपर कह आये हैं सरोजिनी देवी राजनीतिज्ञ होने की अपेक्षा कवि अधिक हैं और एक कवि की कल्पना के लिये इटाली में जितने प्राकृतिक सौन्दर्य और दृश्य विद्यमान हैं उतने अन्यत्र नहीं, ऐसी यूरोपीय कवियों की धारणा है। स्वयं श्रीमती सरोजिनी देवी इटाली की प्रशंसा इन शब्दों में करती हैं —

"यह इटाली सोनेकी बनी हुई है। मई के सुहावने महीने में इटाली के भीतर उषाकाल और सूर्यप्रकाश सोने के, और रात को चमकते हुए तारे सोने के हैं जिन्हें देख कर मन मुग्ध होजाता है। शीतल मन्द सुगंध वायु से परि-पूर्ण निशा के अन्धकार के भीतर खद्योत मंडली 'हवाई सोने' की भांति शोभा देते हैं। एक अंधेरी रात में मैं एक बग़ीचे में खड़ी थी और मेरे बालों में कितने ही जुगनू ऐसे शोभायमान थे मानो गिरते हुए तारे अंधकार के जाल में फंसे हुए हैं। इस से मुझे सहसा ऐसा प्रतीत होने लगा कि मानो मैं मनुष्य नहीं परी हूं।"

जैसा ऊपर कहा गया है और इटाली की इतनी प्रशंसा से भी प्रगट होता है, श्रीमती सरोजिनी देवी की कविता की भाषा के साथ ही उन के भाव भी प्रारम्भ से विदेशी दृश्यों के आधार पर बने हुए विदेशी ही होते थे। परन्तु पीछे यह बात नहीं रही और सरोजिनी स्वदेशी भाव तथा दृश्यों के वर्णनों से पूर्ण कवितायें करने लगीं, यद्यपि कविता की

भाषा अंग्रेज़ी ही बनी रही। किस प्रकार यह विचित्र परिवर्त्तन उपस्थित हुआ इस का पता उन की पुस्तक 'बर्ड आफ़ टाइम' में मि० एडमंड गोस की लिखी हुई भूमिका से चलता है। उस भूमिका में मि० एडमंड गोस लिखते हैं कि, "मैंने सरोजिनी देवी से प्रार्थना की कि आप एक भारतीय युवती हैं, जिसमें ग्रहण करने की महती शक्ति विद्यमान है। आपने पश्चिमी भाषा पर ही अधिकार नहीं जमाया है, बल्कि पश्चिम के छन्दशास्त्र में भी आप पारंगत हैं। इस लिये आप से हम ऐसी कविता की कामना नहीं रखते जो अंग्रेज़ी ढंग की और अंग्रेज़ी भावों से ही परिपूर्ण हो बल्कि हम चाहते हैं कि आप भारतीय भाव और प्राचीन धर्मके सिद्धान्तोंका व्यापक और वास्तविक वर्णन करें तथा वे गूढ़ बातें बतायें जो उस समय से बहुत पहले पूर्व की आत्मा को प्रगति प्रदान करती थीं जब कि पश्चिम ने यह विचारना भी प्रारम्भ नहीं किया था कि उस के भी आत्मा है। साथ ही मैंने सरोजिनी से यह भी प्रार्थना की कि विलायती पक्षियों और गिर्जाघरों के घंटों के विषय में अब और अधिक न लिखकर फलों, फूलों और वृक्षों का वर्णन करें और अपनी कविताओं का आधार पहाड़ों, बग़ीचों तथा मन्दिरों को बनावें तथा अपने प्रदेश के लोगों का स्पष्ट वर्णन उन में दें। दूसरे शब्दों में आप दक्षिण की सच्ची भारतीय कवि बनें और अंग्रेज़ी भाषा के कवियों की नक़ल न करें। सरोजिनी के ध्यान में यह बात शीघ्रता से पैठ गयी और तुरन्त ही इसे स्वीकार कर के जितनी भी जल्दी हो सका उन्हों ने इस सलाह के अनुसार कार्य किया। मेरा विश्वास है कि १८९५ई० से इधर सरोजिनी ने ऐसी कोई कविता नहीं लिखी जिस से यह पता न चले कि एक मात्र भारतीय भावों के आधार पर ही

वह लिखी गयी है । सरोजिनी ने भारत की भूमि पर जन्म ग्रहण किया है और यद्यपि वे अपने भाव अंग्रेज़ी भाषा में प्रकट करती हैं तो भी वे भी शुद्ध भारतीय होते हैं और पश्चिम से कोई सम्बन्ध नहीं रखते ।"

श्रीमती सरोजिनी देवी जिस प्रकार सहसा पश्चिमी रुचि, भाव और ढंग को छोड़कर स्वदेशी भावों से पूर्ण कविता करने लगीं यह उन्हीं जैसे प्रतिभाशाली के योग्य है । विदेशी भाषा की कविता में स्वदेशी भाव ही व्यक्त करना, ख़ासकर सरोजिनी जैसे पश्चिमीय भावों में ढले हुए कवि के लिये, वास्तव में आश्चर्यजनक बात है। इसीसे कहना पड़ता है कि श्रीमती सरोजिनी नायडू जन्म से ही कवि हैं।

सरोजिनी की कविता की अन्य विशेषताएं ।

श्रीमती सरोजिनी नायडू को भगवान ने जैसा सौंदर्य प्रदान किया है वैसी ही सौंदर्य-पूर्ण उनकी कविता भी होती है । यदि उन्हें सौंदर्य की मूर्ति और साथ ही सौंदर्य की उपासक कहा जाय तो कोई अत्युक्ति नहीं। प्राकृतिक सौंदर्य के वर्णन के साथ ही उनकी कविताएं विविध भावों से परिपूर्ण हैं । कुछ कविताओं में वसन्त ऋतु का सुहावना दृश्य अङ्कित किया गया है तो अन्यों में आध्यात्मिक भावों का प्राधान्य है । कुछ कविताओं में प्रेम का विशद वर्णन है तो अन्यों में अतीत भारत के गौरव की गाथा है। कहने का मतलब यह कि जिस भाव को लेकर सरोजिनी देवी ने जो कविता लिखी है उसमें उन्हों ने कमाल कर डाला है। जैसा कहा जा चुका है वे कविता अंग्रेज़ी भाषा में करती हैं इस लिये उनकी कवित्व का आनन्द हिन्दी-भाषी नहीं लाभ कर

सकते। परन्तु अपनी असाधारण प्रतिभा के कारण श्रीमती सरोजिनी देवी इंगलैंड और इटाली में सुप्रसिद्ध हो चुकी हैं। इसीसे सन् १९१४ ई० में श्रीमती सरोजिनी नायडू को 'रायल एशियाटिक सोसाइटी आफ़ लिटरेचर' की सदस्यता प्रदान की गयी। इस सम्बन्ध में इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि इंगलैंड के राजा चौथे विलियम के समय से अब तक यह सम्मान एक दर्जन महिलाओं को भी नहीं मिला है।

समाज-सुधार में अनुराग।

जैसा एक प्रकार से स्वाभाविक था अंग्रेजी शिक्षा-प्राप्त श्रीमती सरोजिनी देवी ने देश की सामाजिक कुरीतियों के दूर करने में अपने जीवन के प्रारम्भ से ही पूरा अनुराग दिखाना शुरू कर दिया था। जाति-बन्धन को तोड़ एक अति कुलीन ब्राह्मण के घर जन्म लेकर भी उन्होंने दूसरी जाति के मेजर यम० जी० नायडू के साथ अपना विवाह किया। यथेष्ट शिक्षा प्राप्त कर लेने के पश्चात् १९-२० वर्ष की अवस्था में विवाह करना भी बाल विवाह के इस युग में कोई साधारण बात नहीं थी। वे प्रारम्भ से ही सामाजिक कुरीतियों को मिटाने के लिये होनेवाले कामों में भाग लेती रही हैं और सच पूछिये तो इस ओर काम करने के कारण ही श्रीमती सरोजिनी नायडू पहले पहल भारत भर में विख्यात हुई थीं। परन्तु इससे किसी को यह भ्रम न होना चाहिये कि वे सामाजिक कुरीतियों के साथ ही भारत के प्राचीन जातीय आदर्शों को भी मिटाना चाहती हैं। भारतीय स्त्रियों की अवस्था को उन्नत बनाने के लिये वे सदा व्यग्र रहती

हैं, किन्तु उन्हें पश्चिमी ढंग से नहीं बल्कि सीता और सावित्री के आदर्श पर चलाना चाहती हैं। भारतीय स्त्रियों के सम्बन्ध में उनके जो भाव हैं उन्हें मद्रास की एक महिला सभा में इस प्रकार व्यक्त किया था—"किसी जाति की स्त्रियों से ही उसके कामों और योग्यता की ठीक ठीक नाप हो सकती है। इसलिये हमारी भारत माता की सेवा उसकी उन कोटि कोटि पुत्रियों को करना चाहिये जिनके भीतर परमात्मा के अनुग्रह से सीता, सावित्री तथा हमारे पुराणों में वर्णित अन्य देवियों की अमर आत्माएं अब भी जीवित हैं।"

श्रीमती सरोजिनी नायडू ने १९१५ ई० की २१वीं अगस्त को बम्बई के विद्यार्थियों की एक समिति में अपने व्याख्यान में कहा था कि,—"मनुष्य की आत्माएं उसके ही जातीय आदर्शों और जातीय जागृति द्वारा ढाली और राह पर चलायी जाती हैं।" इसी से सिद्ध होता है कि अपने जातीय भाइयों का ध्यान किस प्रकार उनके हृदय में सदा विद्यमान रहता है।

१९०६ ई० में श्रीमती सरोजिनी नायडूने कलकत्ते की इंडियन सोशल कानफरेंस में जो भाषण किया था वह ऐसा प्रभावपूर्ण और भावयुक्त था कि श्रीयुक्त गोखले उस पर मुग्ध हो गये, श्रीमती जी के मित्र बन गये।

भारतीय स्त्रियों को भी पुरुषों के समान मताधिकार प्राप्त होना चाहिये जिससे इन्हें भी देश की शासन व्यवस्था में उचित भाग प्राप्त हो, इसके लिये श्रीमती सरोजिनी नायडू ने बड़ा आन्दोलन किया है और इनके उद्योग से बम्बई प्रान्त में स्त्रियों को बहुत कुछ मताधिकार प्राप्त हो गया है। वह दिन दूर नहीं दिखाई पड़ता है जब अन्य प्रदेश

में भी यह अधिकार मिल जाये। १९१९ की ७ अगस्त को सेलबोर्न कमेटी के सामने उन्होंने स्त्रियों के मताधिकार के विषय में जो साक्षी दी थी वह ऐसी विद्वत्तापूर्ण थी कि स्वयं लार्ड सेलबोर्न ने उसकी भूरि भूरि प्रशंसा की थी। सच पूछिये तो जिस समय मांटेग्यू सुधारों की रचना भारत के भाग्यविधाता लोग सात समुद्र पार बैठे हुए कर रहे थे उस समय श्रीमती सरोजिनी नायडू ने भारतीय स्त्रियों के मताधिकार के लिये इंगलैण्ड में बड़ा आन्दोलन मचाया था और उसी के फलस्वरूप सुधार-ऐक्ट में प्रादेशिक कौंसिलों को इस विषय में उचित कार्य करने की स्वतंत्रता दी गयी है।

सरोजिनी की वाग्मिता और छात्र।

अन्य अनेक विशेषताओं के साथ ही श्रीमती सरोजिनी नायडू की सबसे बड़ी विशेषता उनकी वाग्मिता है। छात्र समुदाय से लेकर बड़े बड़े राजनीतिज्ञ तक आपकी वाग्मिता के कारण मुग्ध हो जाते हैं। कर्मवीर गाँधी जैसे महात्मा आपको 'भारत की बुलबुल' उपाधि से याद किया करते हैं। एक भारतीय महिला की इस वाग्मिता का प्रभाव मुख्य करके छात्र-मंडली पर होना ही चाहिये। क्योंकि उसे ही अन्य बातों के सिवा वाग्मी बनने की भी अधिक रुचि होती है। इसी से हम देखते हैं कि सार्वजनिक सभाओं में श्रीमती सरोजिनी नायडू का व्याख्यान सुनने के लिये छात्र मण्डली व्याकुल रहती है। अनेक बार छात्रों की संस्थाओं ने अपनी कानफरेंसों की अध्यक्षता प्रदान करके उनका सम्मान किया है। १९१५ ई० की ५ वीं जुलाई को मद्रास के गंटूर

नगर में छात्रों की एक सभा में श्रीमती नायडू ने कहा था कि "आप जानते हैं कि छात्रों का आन्दोलन जनता के दैनिक जीवन को इतनी अधिक आवश्यक शक्ति है कि कोई ऐसे भविष्य की कल्पना ही नहीं कर सकता जिसमें राष्ट्रीय जीवन के भीतर छात्रों का आदर्श और छात्रों की सेवा करने की योग्यता अत्यन्त उत्साहवर्द्धक कार्य न गिना जाय।"

मद्रास पचैयाप्पा कालेज की हिस्टारिकल सोसाइटी के अपने सारगर्भ और प्रभावपूर्ण भाषण में श्रीमती सरोजिनी नायडू ने कहा था कि "तुमसे बड़ी बड़ी आशाएँ की जाती हैं। तुम्हारे ऊपर बड़े बड़े कर्त्तव्यों का भार है। तुम्हें ऐसे ऐसे कर्त्तव्यों का भार सौंपा गया है जिनकी पूर्ति की ज़िम्मेवारी तुम्हारे ऊपर है। तुम कहां हो और कौन हो इसकी चिन्ता नहीं। सड़क साफ करनेवाला एक भंगी भी देश-भक्त हो सकता है। उसके भीतर तुम नित्युपदेश देनेवाली आत्मा देख सकते हो जो तुम्हारे हृदय को प्रोत्साहित कर सकती है। तुम में से कोई भी ऐसा तुच्छ और नाचीज़ नहीं है कि तुम अपने कर्त्तव्यों की अवहेलना कर सको। वे कर्त्तव्य ऐसे हैं जो पहले से तुम्हारे लिये निरधारित हैं और तुम्हारे सिवा उन्हें दूसरा कोई नहीं पूरा कर सकता। इसलिये तुममें से हर एक का परम कर्त्तव्य है कि अपने देश का उद्धार करने के लिये अपना जीवन अर्पण कर देना चाहिये।"

इस प्रकारके उत्साहवर्द्धक उपदेशों को श्रीमती सरोजिनी नायडू के कोकिल-कंठ से सुनने की अभिलाषा भला किस छात्र को न होगी। इसी से हम देखते हैं कि जिस किसी भी सार्वजनिक सभा में श्रीमती सरोजिनी नायडू उपस्थित रहती हैं उसमें छात्र-मण्डली उनका उपदेशामृत पान करने

के लिये बे तरह उत्कण्ठित दिखाई पड़ता है। यदि किसी सभा में अस्वास्थ्य या अन्य किसी कारण से श्रीमती नायडू की व्याख्यान देने की इच्छा नहीं होती, तो भी छात्र-समुदाय उनके व्याख्यान के लिये शोर मचाता है और अनेक अवसरों पर उन्हें अनिच्छा होने पर भी बोलना पड़ता है।

राजनीतिक क्षेत्र में।

ऊपर अति संक्षेप में सरोजिनी देवी के उन सब कामों और विशेषताओं पर विचार प्रकट किये गये हैं जो राजनीति के बाहर के हैं। परन्तु वे राजनीतिज्ञ की अपेक्षा कवि अधिक हैं तो भी आज अपने राजनीतिक कामों के कारण ही वे भारत भर में इतनी विख्यात हो रही हैं। इस समय भारत के राजनीतिक क्षेत्र में जितने नेता कार्य कर रहे हैं श्रीमती सरोजिनी नायडू उनकी मुख्य श्रेणी में हैं। परन्तु इससे यह न समझना चाहिये कि अन्य नेताओं के समान ये बहुत समय से इस क्षेत्र में हैं। जैसा पहले लिखा जा चुका है, बचपन से लेकर १२–१३ वर्ष पहले तक ये मुख्यतः अंगरेज़ी की कविता करने और समाज-सुधार के कामों में ही लगी थीं। समाज-सुधार के सम्बन्ध में इन्होंने भारत के सभी खास खास नगरों का भ्रमण किया और व्याख्यानों तथा लेखों द्वारा सामाजिक कुरीतियां मिटाने की आवश्यकता बताती रही थीं। राजनीतिक क्षेत्र में इनका प्रवेश सन् १९१३ ई० में हुआ जब कि इन्होंने लखनऊ की मुस्लिम लीग में हिन्दू-मुस्लिम एकता के विषय में बड़ा प्रभाव-पूर्ण भाषण दिया था। उसमें इन्होंने इतने ज़ोरदार शब्दों में ऐक्य की आवश्यकता बताई थी और इस ओर इतना अधिक उद्योग किया था कि मुख्य कर के

उस के फल स्वरूप दो वर्ष के भीतर ही दोनों जातियों का जाति-गत राजनीतिक वैमनस्य कम से कम कुछ समय के लिए तो बहुतकुछ मिट गया। हिन्दू-मुस्लिम एकता के विषय में प्रारम्भ से लेकर अब तक इन्होंने जैसा उद्योग किया है उसका कुछ अधिक वर्णन आगे चलकर किया जायगा। यहां इतना ही कहना यथेष्ट है कि इस एकता के प्रश्न के साथ ही इनके राजनीतिक कार्यों का श्रीगणेश होता है और आज तक हिन्दू-मुस्लिम एक्य बनाये रखने के उद्योगियों में इनका दरजा महात्मा गांधी के बाद ही निकलेगा।

सन् १९१५ से श्रीमती सरोजिनी नायडू भारतकी राष्ट्रीय कांग्रेस में भाग लेने लगीं और तबसे अब तक ये अधिकाधिक उत्साह के साथ कांग्रेस द्वारा देश की सेवा में लगी हुई हैं। भारत के राजनीतिक कार्यों का इतिहास जानने वालों को मालूम ही है कि जिस समय (सन् १९१५ में) श्रीमती सरोजिनी नायडू कांग्रेस में सम्मिलित हुई हैं उसके पहले भारत के राजनीतिक क्षेत्र में अनेक प्रकार की फूट विद्यमान थी। उस समय कांग्रेस में दो दल हो गये थे और माडरेट महारथियों ने लोकमान्य तिलक के राष्ट्रीय दल वालों के लिये कांग्रेस का फाटक ही बन्द कर रखा था। उधर हमारे मुसलमान भाइयों को अंगरेज़ शासकों की 'प्यारी बीबी' बनने में ही मज़ा मालूम हो रहा था और कांग्रेस के विरोधी बन नौकरशाही को भारत में उठते हुए राष्ट्रीय भावों को कुचल डालने में साहाय्य प्रदान करना ही उन्होंने अपना कर्त्तव्य समझ रखा था। कांग्रेस के नरम और गरम दल की फूट के कारण उस पर नरमदली नेताओं का अधिकार तो हो गया था, लेकिन लोकमान्य तिलक के राष्ट्रीय दल के अभाव

में राष्ट्रीय कांग्रेस की जान ही निकल गयी थी जिससे १६०७ की कलह के बाद से प्रति वर्ष उसका तेज और प्रभाव घटता गया और लाला लाजपतराय जैसे माननीय नेता तक ने राष्ट्रीय दलसे रहित उस कांग्रेस को भारत की राष्ट्रीय कांग्रेस मानना स्वीकार नहीं किया। जब सात आठ वर्षों के भीतर ही राष्ट्रीय कांग्रेस की दशा ऐसी शोचनीय हो गयी कि वह काँग्रेस के स्थान पर कुछ माडरेटों की मजलिस ही रह गयी, तब माडरेटों को अपनी ग़लती मालूम हुई और यूरोप में छिड़े हुये महायुद्ध के बाद दोनों दलों में पुनः ऐक्य स्थापित करने की आवश्यकता और भी अधिक प्रतीत होने लगी। उधर महायुद्ध के कारण पैदा हुई स्थिति ने मुसलमान भाइयों की आंखें खोल दीं जिससे उन्हें भी अपनी और अपने पवित्र खिलाफत की रक्षा के लिये अपने हिन्दू भाइयों से मेल करने की आवश्यकता प्रतीत होने लगी। जब वास्तविक आवश्यकता पैदा होती है तभी उसकी पूर्ति के लिये उपाय भी ढूंढ़े जा सकते हैं। फिर क्या था नरम और गरम तथा हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच ऐक्य स्थापन करने का उद्योग प्रारम्भ हो गया और यह कहना अत्युक्ति पूर्ण न होगा कि खास कर हिन्दू-मुस्लिम-ऐक्य की स्थापना में श्रीमती सरोजिनी नायडू ने सब से अधिक प्रयत्न किया था। ऐक्य की स्थापना में सफलता के साथ ही साथ श्रीमती नायडू की कीर्ति राजनीतिक क्षेत्र में दिन पर दिन बढ़ती ही गयी और इन्होंने कांग्रेस के प्रत्येक आन्दोलन में अपना पूरा भाग लिया है।

ऐक्य का माहात्म्य और स्वराज्य।

१९१६ ई० में लखनऊ की कांग्रेस में स्वराज्य के प्रस्ताव के समर्थन में श्रीमती नायडू ने बड़ा प्रभावपूर्ण भाषण किया था। उस में इन्होंने कहा था कि "हम सब एक हो गये हैं और ऐसे ज़ोर से एक हुए हैं कि कोई भी बाहरी शक्ति, यहां तक कि उपनिवेश भी, हमें हमारे अधिकारों और रियायतों से तथा उन स्वतंत्रताओं से वंचित नहीं रख सकते जो हमारी हैं और जिनका दावा हम सब मिलकर एक स्वर से कर रहे हैं। ... ... सदियां बीत चकीं, अब पुराने मतभेद मिट गये और पुराने ज़खम भर गये। ... ... हम में से प्रत्येक के हृदय में यह सजीव भाव पैदा हो गया है कि भविष्य की सर्वोच्च आशा मातृभूमि की संयुक्त सेवा में ही है। कोई भी ऐसा तुच्छ, ऐसा निर्बलात्मा और ऐसा स्वार्थी नहीं है जो यह न समझे कि मातृभूमि की सेवा में जो आनन्द है वह अन्य सभी वैयक्तिक आनन्दों से बड़ा है और उसके लिये कष्ट उठाने से हमें अपने वैयक्तिक दुःख में सब से अधिक सान्त्वना मिलती है। कोई भी ऐसा नहीं है जो यह नहीं सोचता कि मातृभूमि की उपासना से पाप कटते हैं और उसी के लिये जीना जीवन की सबसे बड़ी जीत है तथा उसके लिये मर जाना अपने को अमर बनाना है।"

स्वराज्य का दावा करने में श्रीमती नायडू प्रथम श्रेणी के नेताओं में हैं और इनका दृढ़ विश्वास है कि राष्ट्र अपने ही बल पर स्वराज्य लेते हैं, दूसरा राष्ट्र कृपा करके अपने अधीन राष्ट्र को स्वराज्य नहीं दिया करता। इसीसे यद्यपि मांटेगू सुधारों के समय आल इंडिया होमरूल लीग का जो

डेपुटेशन १९१९ के जुलाई महीने में इंगलैण्ड गया था उस में श्रीमती नायडू भी गयी थीं और वहां इन्होंने अपने व्याख्यानों द्वारा भारतीय मांग की न्याय्यता ब्रिटिश जनता के सामने प्रतिपादित की थी, किन्तु ज्यों ही महात्मा गाँधी के नेतृत्व में कांग्रेस ने असहयोग द्वारा स्वराज्य लेने की ठानी त्यों ही असहयोग-सेना में सब से पहले ये भर्ती हो गयीं।

रॉलट ऐक्ट के विरुद्ध सत्याग्रह।

जब भारत के नरम और गरम सभी नेताओं के घोर विरोध करने पर भी नौकरशाही ने रॉलट ऐक्ट पास कर लिया तब देश में घोर अशान्ति पैदा हो गयी। महात्मा गाँधी ने ऐक्ट के विरुद्ध सत्याग्रह करने की घोषणा की तो श्रीमती सरोजिनी नायडू ने सबसे पहले सत्याग्रह-सेना में अपना नाम लिखाया। इतना ही करके वे शान्त नहीं हुईं, बल्कि मद्रास, बम्बई और अहमदाबाद में प्रभावशाली व्याख्यानों द्वारा लोगों को महात्मा गांधी की सत्याग्रह-सेना में भर्ती होने की अपील की जिसके फल स्वरूप सत्याग्रहियों की संख्या बेहिसाब बढ़ने लगी। बम्बई में महिलाओं ने श्रीमती सरोजिनी नायडू की अध्यक्षता में एक सभा करके रॉलट ऐक्ट के विरुद्ध सत्याग्रह करने का निश्चय किया।

मद्रास के गोखले हाल में रॉलट ऐक्ट के विरुद्ध जो सभा हुई थी उसमें श्रीमती नायडू ने अपने व्याख्यान में कहा था कि "हमें बड़ी लम्बी चौड़ी वक्तृताएं देकर ही चुप न हो जाना चाहिये बल्कि इस ऐक्ट का घोर विरोध करने में सब सुख भूल जाने चाहिये। केवल प्रस्ताव पास कर लेने से ही कुछ न होगा। हम न्याय चाहते हैं, भीख नहीं मांगते हैं।"

अप्रेल के प्रारम्भ में श्रीमती नायडू ने अहमदाबाद के अपने ज़ोरदार भाषण में कहा था कि "मैं बीमार हूं तो भी आप के सामने क्यों खड़ी हूं ? हमारा हृदय इतनी गहराई तक क्यों हिल गया है ? हमें सुखपूर्वक नींद क्यों नहीं आती है ? इसका कारण यही है कि हमें बड़े भयङ्कर दुःस्वप्न से सामना करना पड़ता है और सङ्कट की बात तो यह है कि अगर यह दूर न कर दिया जायगा तो हम आप सदा के लिये नष्ट हो जायंगे । कांग्रेस-लीग स्कीम का क्या हुआ ? जिन मांटेगू-चेम्सफोर्ड शासन सुधारों के विषय में इतनी लम्बी चौड़ी बातें थीं वे कहां चले गये ? वे सब पीछे चले गये और रौलट बिलों या काले बिलोंके लिये स्थान ख़ाली कर गये। हमें आशा हो रही थी कि युद्ध समाप्ति के बाद हम प्रतिष्ठित पद को प्राप्त होंगे, क्योंकि हमने हिन्दुओं और मुसलमानों के ऐक्य का पूरा प्रमाण ही नहीं दिया, बल्कि युद्ध में इतनी योग्यता के साथ अपना कर्त्तव्य निबाहा था। मि० मांटेगू के भारत आने और लार्ड चेम्सफोर्ड के साथ देश के एक सिरे से दूसरे सिरे तक घूम आने और सहानुभूति प्रकट करने का कुछ फल नहीं हुआ क्योंकि अपने एक हाथ में उन्हों ने तलवार और दूसरे में विष का प्याला ले रखा है। जान पड़ता है कि वे कहते हैं कि, "यह तुम्हारे लिये रोटी है, पर उसे तब पाओगे जब पहले पीकर यह विष का प्याला बिल्कुल ख़ाली कर दोगे।" मेरे साथ ही आप लोग भी कहें कि जब तक भारतीयों में शक्ति और सदाचार है, जब तक उन में कुछ भी आत्मसम्मान का भाव है तब तक वे दृढ़तापूर्वक विष का प्याला ख़ाली करने से इनकार करते हुए कहेंगे कि "वह रोटी ले जाओ । वह हमारे लिये निन्दनीय

है क्योंकि विष-मिश्रित है।"

विष या पशुबल की एक ही दवा है जो सत्याग्रह नाम से प्रसिद्ध है। हमसे किसी ने कहा है कि शक्तिहीन आन्दोलन में तुम महात्मा गाँधी के पीछे क्यों चल रही हो? वे भूल गये हैं कि लोगों का अब वैध आन्दोलन में विश्वास नहीं रहा है। यदि काले बिल में न्याय का कुछ भी स्थान होता तो ग़ैरसरकारी मेम्बर क्यों उसके विरुद्ध सम्मति देते? दुर्भाग्य की बात तो यही है कि अफ़सरों के हृदय जनता की सर्वसम्मति का वास्तविक सम्मान नहीं करते। अब रॉलट बिल पास हो क़ानून हो गया इसलिये उसे रद्द कराने के दो उपाय हैं—या तो ग़दर हो या तपस्या की जाये। यूरोपियन युद्ध की तरह युद्ध छेड़ने के कारण उपस्थित करना हमारे स्वभाव की बात नहीं है। हम धर्म पर स्थित हैं जो राष्ट्र को उच्च बनाता है। हमें विश्वास नहीं कि मेशीनगनों से हमारे बड़प्पन में तिलभर की भी वृद्धि होगी। हम कोयले की खानों, शानदार बंगलों और बच्चों को नहीं जलायेंगे। मायाओं के फेर में यूरोप ही रहे। भारत न्याय-शीलता के रास्ते से कभी विचलित न होगा। हमें सत्य का अनुसरण धार्मिक कर्त्तव्य समझकर करना चाहिये। सत्य बोलना अच्छा है, पर सत्याचरण करना उससे भी अच्छा है। हम जो काम करें उसमें सत्य का ही अनुसरण करें। यहां तक कि अपने शत्रुओं के साथ भी हम सत्य का बर्त्ताव करें। हमें धर्म पर दृढ़ रहना होगा। जर्मनों ने सत्यशीलता का मार्ग छोड़ युद्ध सम्बन्धी सार्वराष्ट्रीय नियमों को दूर फेंक दिया। उसका क्या फल हुआ, यह हम जानते हैं। भारतने जर्मनी के विरुद्ध सत्य तथा ब्रिटिश राज्य के प्रति अपनी

भक्ति का परिचय देने के लिये हथियार उठाया और उसे दृढ़ विश्वास था कि हमें उसका इनाम मिलेगा। हमें इस बात से घोर निराशा हुई है कि भक्ति के बदले प्रेम पैदा होने के स्थान में नौकरशाही ने हमारे विचारों के विषय में सन्देह करना उचित समझा है। कुछ बात नहीं। हम इन काले बिलों को नहीं स्वीकार करेंगे जो हमें हमारे जीवन की सभी प्रिय वस्तुओं से वञ्चित करते, पारिवारिक बन्धन तोड़ते और सब प्रकार की प्रसन्नता का मूलोच्छेद करते हैं। हम उस क़ानून को कभी न मानेंगे जो हम सबों को गुलाम बनाता है। सत्याग्रही पलटनें सत्याग्रह-युद्ध के लिये आगे बढ़ेंगी जिससे हमारे चिर प्रतिष्ठित गौरव की अकारण ही किये जानेवाले आक्रमण से रक्षा कर सकें। अब काला बिल देश में क़ानून बन गया है इसलिये नहीं कहा जा सकता कि तलवार कब हमारे सिरों पर आ गिरे। काले क़ानूनों के आगे सिर झुका सङ्कट में फंसने से यह अच्छा है कि हम सत्याग्रही हो निर्भय बनें। उन महात्मा गाँधी को जो धन और प्रतिष्ठाओं पर लात मारते और जिन्हें वायसराय की प्रसन्नता या मृत्यु के भय की कुछ भी परवाह नहीं है, इन्हीं कारणों से इस शस्त्र से काम लेना पड़ा है। जिन्हें साहस हो वे महात्माजी के साथ हों। जो ऐसा नहीं कर सकते उन्हें लज्जा के मारे अपने अवनत मस्तकों को छिपाने की आवश्यकता नहीं है। कारण, उनके हृदय से स्वतः पैदा हुई इस आन्दोलन के साथ सहानुभूति भी हमारे लिये कुछ कम सन्तोष की बात न होगी।

सत्याग्रह की प्रतिज्ञा और कानूनभंग।

महात्मा गांधी ने रालट ऐक्ट के विरुद्ध सत्याग्रह का जो प्रतिज्ञापत्र तैयार किया वह इस प्रकार था—

"शुद्ध भाव से यह जानकर कि १९१९ का पहला इंडियन क्रिमिनल ला (अमेण्डमेण्ट) बिल तथा १९१९ का दूसरा क्रिमिनल (इमरजेन्सी पावर्स) बिल—ये दोनों न्यायशून्य, न्याय और स्वतंत्रता के सिद्धान्त तथा व्यक्तियों के उन मूल अधिकारों के नाशक हैं जिन पर कुल जाति तथा स्वयं राज्य का कुशल अवलम्बित है। हम लोग शपथ करते हैं कि यदि ये बिल क़ानून बना दिये जायंगे तो जब तक ये लौटा न लिये जायेंगे तब तक हम नम्रतापूर्वक इन क़ानूनों और उन सब अन्य क़ानूनों का पालन करने से इनकार करेंगे जिन्हें नियुक्त की जानेवाली कमेटी निश्चय करेगी। हम यह भी शपथ करते हैं कि इस सत्याग्रह की लड़ाई में हम निष्कपट भाव से सत्य मार्ग पर चलेंगे और किसी को जान या माल पर चोट न करेंगे।"

कहने की आवश्यकता नहीं कि श्रीमती सरोजिनी नायडू ने भी इस प्रतिज्ञापत्र पर सबसे पहले दस्तख़त बनाया और जब रालट बिल भारतीय नेताओं के घोर विरोध करने पर भी पास कर दिया गया और उसकी सूचना २३ वीं मार्च रविवार को प्रकाशित हो गयी तब छठी अप्रेल को हड़ताल मनानेका निश्चय किया गया। परन्तु छठी अप्रेल को सत्याग्रह-दिन मना कर ही सत्याग्रही चुप नहीं बैठ गये। सत्याग्रह सभा ने निश्चय किया कि वर्जित पुस्तकों और समाचार-पत्रों की रजिष्ट्री के सम्बन्ध के क़ानूनों को अभी सविनय भंग

कर सकते हैं। सभा के निश्चय के अनुसार महात्मा गांधी आदि नेताओं के साथ श्रीमती सरोजिनी नायडू ने ७ वीं अप्रेल को महात्मा गांधी जी की लिखी हुई 'हिन्द स्वराज्य' 'सर्वोदय', 'एक सत्याग्रही की कहानी' तथा मिस्र के सुप्रसिद्ध देश-भक्त मुस्तफ़ा कमालपाशा की जीवनी बेची जिनका प्रचार सरकार ने ग़ैरक़ानूनी ठहरा दिया था। गुजराती में लिखे और छपे हुए बिना रजिस्टरी किये हुए अख़बार भी बेंचे गये। कर्मवीर गांधी की सम्पादकता में 'सत्याग्रही' पत्र भी निकला। इस तरह श्रीमती नायडू ने खुल्लमखुल्ला क़ानून भंग किया और ऐसी पुस्तकें बेचीं जिनका प्रचार सरकार की ओरसे रोका ही नहीं गया था, बल्कि अपराध ठहराया गया था। यह सभी जानते हैं कि यद्यपि श्रीमती नायडू आदि इस प्रकार क़ानून भंग करने के कारण पकड़ी नहीं गयीं लेकिन महात्मा गांधी की आज्ञा से जो पहिली ही हड़ताल पूर्ण-रूप से सफल हो गई उसे देखकर नौकरशाही का दिल दहल गया और वह किंकर्तव्य-विमूढ़ हो गयी। दिल्ली के अधिकारियों की अदूरदर्शिता ने उस दिन वहां पर बड़ी नादानी से काम लिया और जब दिल्ली जाते हुए महात्मा गाँधी रास्ते ही में रोक लिये गये और एक स्पेशल ट्रेन द्वारा फिर अहमदाबाद पहुंचा दिये गये तो देश भर में क्रोध का भाव छा गया। अमृतसर के सरकारी अधिकारियों ने अपराधपूर्ण ग़लतियां कीं और उस समय के पंजाब के लाट सर माइकेल ओडायर ने अमृतसर के जलियानवाला बाग़ तथा प्रान्त के अन्य कई स्थानों पर भयंकर हत्याकांड उपस्थित कर दिया। देश भर में अशान्ति पैदा हो गयी और भारतीय जनता महात्मा गांधी का सत्याग्रह के लिये नेतृत्व

चाहने लगी। उधर ख़िलाफ़त के सम्बन्ध में यूरोप के ईसाई राज्यों ने मिलकर जैसा अन्याय किया था उससे हमारे मुसलमान भाई मरने मारने को तैयार होते दिखाई दिये। तब शान्ति की मूर्ति और अहिंसा तत्व के अनन्य मर्मज्ञ महात्मा गांधी ने हिंसा रहित असहयोग के द्वारा ख़िलाफ़त का अन्याय मिटाने की प्रतिज्ञा कर के मुसलमानों का रुख़ मार-काट की ओर से पलट कर देश को भारी अशान्ति और उपद्रव से बचा लिया। पीछे महात्मा जी ने अन्य नेताओं की सलाह से ख़िलाफ़त के साथ ही पंजाब के हत्याकांड का अन्याय दूर कराने तथा स्वराज्य प्राप्त करने के उद्देश्य से सहयोग करने की घोषणा की जिससे उनके आन्दोलन में कुछ स्वार्थी माडरेटों के सिवा सभी नेता सम्मिलित हो गये और जनता तो पूर्ण रूप से महात्मा गाँधी के नेतृत्व में आ गयी।

श्रीमती नायडू का असहयोग।

महात्मा गांधी के अहिंसात्मक असहयोग आन्दोलन में जिस तरह श्रीमती नायडू पड़ीं उसी तरह उन्होंने उसमें क्रियात्मक भाग लिया। वे महात्मा गाँधीकी अत्यन्त विश्वास-पात्र बन गयीं और उन्होंने केवल भारत में ही नहीं विलायत में भी ख़िलाफ़त और पंजाब के अन्यायों तथा स्वराज्य के लिये घोर आन्दोलन किया। महात्मा गांधीके नेतृत्व में राष्ट्रीय कांग्रेस ने जो अहिंसात्मक असहयोग का सिद्धान्त स्वीकार किया था उसमें सब से पहला निश्चय यह था कि सरकार की दी हुई पदवियां और पदक लौटा दिये जायं। श्रीमती सरोजिनी नायडू को भी क़ैसरेहिन्द का पदक (तमग़ा)

मिला हुआ था। उन्होंने उसे लौटाते हुए वायसराय लार्ड चेम्सफोर्ड को जो पत्र सन् १९२० की ३१ वीं अगस्त को लिखा था उसका अनुवाद नीचे दिया जाता है:—

"महाशय,

मैंने भारतीय ख़िलाफ़त प्रतिनिधि मंडल को यह कार्य सौंपा है कि वह उस क़ैसरेहिन्द पदक को वापस दे दे जिसे धारण करने में मुझे गर्व मालूम होता था। लेकिन कुछ दिनों से इसे त्यागने की मेरी इच्छा इसलिये थी जिसमें मैं अपने देश तथा देशवासियों के ऊपर किये हुए नीचता-पूर्ण अन्यायों तथा उन्हें दी हुई यंत्रणाओं के प्रति अपने अत्यन्त क्रोध को एक तरह से और प्रकट कर सकूँ। पिछले कुछ वर्षों के भीतर प्रायः निरन्तर ही पहले की की हुई प्रतिज्ञाएं जान बूझकर ताड़ी गयीं, निर्दयता-पूर्वक अत्याचार किये गये तथा एक असहाय राष्ट्र का दयारहित अपमान किया गया। अब तो उन सब अन्यायों की हद हो गयी जब भारतीय मुसलमानों को ख़िलाफ़त के सम्बन्ध में दिये हुए वचन तोड़े गये और पंजाब के शहीदों का ख़ून किया गया है। ऐसी दशा में मैं ऐसी गवर्नमेंट को नीतियों और कामों के साहाय्य प्रदान करना अपनी प्रतिष्ठा और मनुष्यता के विरुद्ध समझती हूं जिसने भारत के हृदय पर अपना सिर रख के परम्परागता ब्रिटिश न्याय और स्वतन्त्रता का तिरस्कार किया है।"

पंजाब के अत्याचार पर क्रोध।

सन् १९२० ई० के प्रारम्भ में श्रीमती सरोजिनी नायडू का स्वास्थ्य बिगड़ गया था इसलिये इंगलड में उन्हें ठहरना पड़ा। वहां पर उन्होंने अप्रेल महीने में लण्डन के किंग्स

वे हाल में भारतीय ख़िलाफ़त डेपुटेशन की ओर से हुई विराट् सभा में ख़िलाफ़त का अन्याय दूर कराने की प्रतिज्ञा करते हुए बड़े ज़ोर का भाषण किया था। पीछे उसी हाल में उनका एक व्याख्यान 'पंजाब की यातना और अपमान' के विषय में हुआ था। उस व्याख्यान में उन्होंने कहा था कि "मेरी बहनों को नंगी करके बेंत लगाये गये। उन्हें कोड़े मारे गये और उनका सतीत्व हरण किया गया।"

श्रीमती की स्पष्ट और ज़ोरदार बातों के कारण विलायत में बड़ी हलचल मच गयी, यहां तक कि पार्लामेंट में भी उन के उस व्याख्यान को लेकर बड़ी चर्चा रही। उस समय भारतमंत्री पद पर मि० मांटेगू विद्यमान थे। मि० मांटेगू ने श्रीमती सरोजिनी नायडू के उस व्याख्यान की रिपोर्ट पढ़के आवेश में आ उन्हें एक पत्र लिखा कि, आपने स्त्रियों के ऊपर जैसे अन्याय होने की बात कही है इनका ज़िक्र कांग्रेस द्वारा नियुक्त जांच कमेटी की रिपोर्ट में कहीं नहीं है, इसलिए अपनी इन बातों को वापस लें और उन का खंडन कर दें। और भी एक पत्र मि० मांटेगू ने श्रीमती नायडू को लिखा जिसमें उनकी कही बातों का खंडन किया था। भारतमन्त्री के उन पत्रों से श्रीमती नायडू घबड़ा जाने वाली नहीं थीं। उन्होंने मि० मांटेगू के पत्रों का कांग्रेस की जांच कमेटी की रिपोर्ट के प्रमाण देते हुए मुंहतोड़ जवाब लिख भेजा और अपनी कही बातों को सत्य सिद्ध किया। अपने और मि० मांटेगू के इस वाद-विवाद के विषय में श्रीमती नायडू ने वहां से १५ वीं जुलाई को महात्मा गांधी को जो पत्र भेजा था उसमें लिखा था कि, "मेरी तन्दुरुस्ती बहुत ख़राब हो रही है। लेकिन मेरी कुल शक्ति और उत्साह, पंजाब

तथा ख़िलाफ़त के प्रश्नों की ओर लग रहा है। पर एक ऐसी जाति से न्याय की आशा करना व्यर्थ है जो शक्ति के अभिमान तथा जाति, धर्म और रङ्ग के पक्षपात से अंधी और पागल हो रही है और जो भारतीय अवस्थाओं, मतों, भावों तथा महत्वाकांक्षाओं का कुछ भी ज्ञान नहीं रखती। कामन सभा में पिछले हफ़्ते में पंजाब के विषय में जो वाद-विवाद हुए हैं उनसे मेरी बची खुची आशा भी टूट गयी है और ब्रिटिश न्याय तथा भारत के नये भावोंके प्रति उसकी सदिच्छा के विषय में मेरा कुछ भी विश्वास नहीं रहा है। वहां जो वाद-विवाद हुआ वह शोचनीय और वास्तव में शोकप्रद था वहां जो हमारे मित्र थे उन्होंने तो अपना अज्ञान प्रकट किया और जो दुश्मन थे उन्होंने अपना गर्व, जिससे हृदय टूक टूक हो जाता है।

मि० मांटेगू टूटे बेत साबित हुए हैं। कांग्रेस जांच कमेटी की रिपोर्ट में वर्णित पंजाब के मार्शल ला के समय स्त्रियों पर किये हुए अत्याचारों के विषय में मेरा उनका जो पत्र व्यवहार हुआ है उसकी नक़ल इस पत्र के साथ भेज रही हूं। स्वभावतः मैं यही मानती हूं कि कांग्रेस जांच कमेटी की रिपोर्ट के साथ जो गवाहियां प्रकाशित की गयी हैं उन में एक भी ऐसा बयान नहीं जो बिना पूरी जांच के स्वीकार किया गया हो। लेकिन यहां वालों का साधारण प्रयत्न कांग्रेस सब-कमेटी के निर्णयों पर अविश्वास करने का जान पड़ता है और ऐसे अत्याचारों की ज़िम्मेवारी भारतीयों के ऊपर लादने का प्रयत्न होता है जो अस्वीकार नहीं किये जा सकते। एक विराट् सभा में उस दिन अपने व्याख्यान में मैंने कहा था कि हम भारतीयों की मांग क्षतिपूर्ति की है, बदला लेने की

नहीं। हम में ऐसी आध्यात्मिक शक्ति और दृष्टि है कि हम में इस बात की सामर्थ्य है कि घृणा और क्रोध को ऐसी वस्तु में परिणत कर सकें जिसके द्वारा हमें और ब्रिटिश जाति दोनों ही को मुक्ति मिले। लेकिन पंजाब की यंत्रणाओं और अपमान को वास्तविक क्षति पूर्ति स्वतन्त्रता ही है।.....डाक्टरों का विचार है कि मेरी बीमारी बहुत बढ़ गयी है और उसकी अवस्था भयंकर है किन्तु तब तक मुझे चैन नहीं पड़ सकती जब तक संसार का दिल हिलाकर शहीद भारत की दुःखपूर्ण अवस्था के वास्ते उससे पश्चात्ताप नहीं करा लेती।"

हिन्दू-मुस्लिम ऐक्य।

जिस समय ख़िलाफ़त डेपुटेशन इंगलैंड गया था श्रीमती नायडू ने उस के साथ वहां ख़िलाफ़त के सम्बन्ध में किए हुए अन्यायों के विरुद्ध घोर आन्दोलन किया था। हिन्दू-मुसलिम ऐक्य की आवश्यकता पर तो ये राजनीतिक क्षेत्र में प्रवेश करने से पहले ही बराबर ज़ोर देती रहती हैं। ये इस सम्बन्ध में अन्य नेताओं की अपेक्षा कहने का कुछ विशेष अधिकार भी रखती हैं। कारण यह है कि ये जिस प्रकार हिन्दू सभ्यता को बड़ी उच्च दृष्टि से देखती हैं वैसे ही इसलाम के आदर्शों की भी प्रशंसक हैं। हिन्दू-मुसलिम ऐक्य को ये बिल्कुल ही स्वाभाविक समझती हैं जैसा १९१७ ई० के अक्तूबर महीने में इन्हों ने पटने के व्याख्यान में कहा था —

"इस देश में मुसलमान टिक जाने के लिये आये थे। यहां आने का उन का उद्देश्य यह नहीं था कि लूट खसोट का माल लेकर फिर अपने घरों को वापस जायें बल्कि उद्देश्य यह था कि

यहां पर ही बस जायें और मातृभूमि को समृद्ध बनाने के लिये एक नयी जाति बनावें। वे भारतवासियों से पृथक कैसे रह सकते हैं? क्या इतिहास से पता चलता है कि भूतकाल में वे यहां के निवासियों से पृथक रहते थे? बल्कि इतिहास तो यह बात बता रहा है कि एक बार वे इस देश में निवास करने का निश्चय करके इसी देश के निवासी बन गये और हममें अच्छी तरह मिल गये।

सरोजिनी देवी का पक्का विश्वास है कि इसलाम धर्म ने ही राजनीतिक साम्राज्यों की रचना की जैसा उन्हों ने १९१७ के दिसम्बर में मद्रास की मुसलिम एसोसियेशन में अपने भाषण में कहा था। उस में इन्होंने कहा था कि "सब से पहले इसलाम धर्म ने ही जनसत्ता की शिक्षा दी और उसे कार्य रूप दिया क्योंकि जब मसजिद में नमाज़ पढ़ने वाले इकट्ठे होते हैं और बादशाह से लेकर ग़रीब किसान तक एक साथ ही घुटने टेक कर अपनी नमाज़ों के समय घोषणा करते हैं कि एक परमात्मा ही महान है तब दिन भर में (पांच नमाज़ों के समय में) पांच बार इसलाम की जनसत्ता सजीव दिखाई पड़ती है। इस अभेद्य ऐक्य को देख कर मुझे सदा चकित हो जाना पड़ता है जो स्वभाव से ही मनुष्य को भाई बना देता है। लंडन में जिस समय एक मिश्रवासी एक अलजीरियावासी, एक तुर्क और एक भारतीय मुसलमान एकत्र होते हैं, तो उनके भ्रातृभाव में इससे कुछ भी अन्तर नहीं आता कि एक तो मिश्रवासी है और दूसरा मुसलमान है भारत का रहने वाला। भ्रातृभाव का यही महान् भाव और मानवीय न्याय का यही उच्च ज्ञान अकबर के शासन ने भारत को प्रदान किया था।"

श्रीमती नायडू का इसलाम धर्म और उसके अनुयायियों से इतना प्रेम क्यों है यह भी उन्हीं के शब्दों में सुन लीजिये। वे कहती हैं कि, "भारत के मुख्य मुसलमानी शहर (हैदराबाद) में मेरा निवासस्थान है। भारतके प्रधान मुसलमान राज्य की उस शहर पर हुकूमत है। वहां पर दो सौ वर्षों से मुसलमानी सभ्यता विराज रही है; वह मुसलमानी सभ्यता जो जानती है कि किस प्रकार अपनी शासन-व्यवस्था के भीतर अपने अधीन सभी जातियों को समान अधिकार और समान सुभीते देने होते हैं। बचपन से ही मैं अपने शहर के मुसलमान पुरुषों और स्त्रियों के साथ साथ रही हूं और बाल्यावस्था में मुसलमान बच्चों ही के साथ खेलती रही हूं।"

श्रीमती नायडू को मि० जिन्ना आदि से अधिक घनिष्ठता रखते देखकर कितने ही अवसरों पर कितने ही लोगों को जो आश्चर्य होने लगता है, हमें आशा है कि श्रीमती नायडू के ऊपर के कथन से वह दूर हो जायगा। निज़ाम के हैदराबाद में जन्म लेने वाली और बाल्यावस्था में मुसलमान बच्चों के साथ खेलने वाली सरोजनी देवी यदि इसलाम सभ्यता को इतनी उच्च दृष्टि से देखें तो आश्चर्य ही क्या? परन्तु जहां वे इसलाम की इतनी प्रशंसक हैं, वहां अपने हिन्दू धर्म का इन्हें पूरा अभिमान है। १९१७ ई० में मद्रास के विद्यार्थियों की एक सभा में भारतीय सभ्यता के विषय में जो प्रभाव-पूर्ण भाषण किया था उसमें उन्होंने कहा था कि, — "भारत को महान बनाने वाली वस्तु क्या थी? वह कौनसी वस्तु थी जिसने भिन्न भिन्न ज्ञानों का प्रकाश करने के अवसर उसे प्रदान किये? वह बात यह थी कि भारत

अपने प्रति सच्चा था। भारत का विश्वास था कि राष्ट्र को आत्मा के भीतर से ही राष्ट्र का सच्चा भाव प्रकट होता है और यद्यपि एक राष्ट्र को उन सब बातों को ग्रहण कर लेना चाहिये जो अन्य सभ्यताओं तथा अन्य युगों में अच्छी पायी जायं, परन्तु विदेशी सभ्यता के द्वारा यह सम्पन्न नहीं किया जा सकता है। इस पर विदेशी बातों का अधिकार नहीं हो सकता। हज़ारों वर्षों के बाद भी हम देखते हैं कि बुद्धि और अध्यात्म विद्या का यह ख़ज़ाना आज भी सुन्दर और अक्षय्य बना हुआ है और जो हमारा है किन्तु हमें स्मरण नहीं रहा कि यह हमारा ही है। हमारे दर्शनशास्त्र आज जीते जागते हैं और इनकी रचना के बाद कितने ही युग बीत चुके तो भी वे इस लिये विद्यमान हैं कि वे भारत के सिद्ध विचारों के विवरण हैं। भारत का धर्म आज भी जीवित है और जैसे पांच हज़ार वर्ष पहले गंगा तट पर प्राचीन वेदों के मंत्रों का उच्चारण होता था वैसे ही आज भी जब हम राष्ट्रीयताके भावों से गिरे हुए यात्री, गंगा-तट पर जाते हैं, वहाँ वेदों के मंत्रगान सुनते हैं और वहां गंगाजल से हमारे मानसिक पाप ही नहीं कटते हैं बल्कि हमारे सभी आध्यात्मिक अपराध भी स्वभावतः दूर हो जाते हैं।"

जिन सरोजिनी देवी के इसलाम और हिन्दू दोनों ही सभ्यताओं के विषय में ऐसे उच्च विचार हों वे यदि हिन्दू-मुसलिम ऐक्य के सम्बन्धों में अनेक कांग्रेसों कानफ़रेंसों में भाषण करती तथा ऐक्य स्थापन के लिये इतना अधिक उद्योग करती देखी जाती हैं तो इस में आश्चर्य क्या है। जिस सभा में श्रीमती नायडू उपस्थित रहती हैं वहाँ प्रायः ऐक्य का प्रस्ताव उपस्थित करने का भार आप ही पर छोड़ा जाता है।

भारतीय जातियों का ऐक्य ।

कई वर्ष पहले मद्रास प्रेसीडेंसी एसोसिएशनके वार्षिक अधिवेशन में श्रीमती नायडू ने यह प्रस्ताव उपस्थित किया था—

"यह कानफ्रेंस दक्षिण भारत की भिन्न भिन्न जातियों से अपील करती है कि भारत के ऐसे सङ्कटकाल में स्थानिक मतभेदों को दूर कर और सब मिलकर मातृभूमि के उद्धार का उद्योग करें।"

इस पर भाषण कहते हुए इन्हों ने हिन्दू जातियों का सच्चा अर्थ इन शब्दों में बताया —

"मातृभूमि की कीर्ति के लिये काम बाँट लेने के सिवा इन जातियोंका और उद्देश्य ही क्या है ? काम इस लिये बाँट लिये गये हैं जिससे अपने ज़िम्मे का काम पूत्येक जाति पूर्ण रूप से करके मातृभूमि को सम्पन्न बनाने में सहायक हो। यह कामों का विभाग राष्ट्रीय सभ्यता और राष्ट्रीय ज्ञान के बनाने और उसकी वृद्धि करने के लिये है। क्या हम अपने विकास के वास्तविक अभिप्राय को इस तरह भूल गये हैं कि जो बात अधिक सम्पन्नता युक्त ऐक्य के लिये थी वही आज अनैक्य, फूट और पतनका कारण हो रही है और जिसका बुरा प्रभाव मातृभूमि की प्रतिष्ठा और उन्नति पर इतना पड़ रहा है।"

श्रीमती सरोजिनी नायडू हिन्दू-मुसलिम-एकता तथा विभिन्न हिन्दू जातियों के ऐक्य की आवश्यकता इतने ज़ोरों से प्रतिपादित करती रहती हैं, इसी से इस ऐक्य पर भाषण करने के लिये प्रायः वे ही चुनी जाती हैं। स्वयं महात्मा गाँधी जी का श्रीमती नायडू पर पूर्ण विश्वास है और जिनकी आंखें हैं वे देख ही रहे हैं कि किस प्रकार असहयोग आन्दोलन के

प्रारम्भ से ही महात्माजी के साथ ही साथ बड़े उत्साह के साथ श्रीमती जी काम कर रही हैं। सन् १९२२ ई० की १८ वीं मार्च को जब भारत के अनन्यतम कर्मयोगी महात्मा गाँधी को जज ने ६ वर्ष की सज़ा सुनायी थी तब वैसे तो भारत के भिन्न भिन्न स्थानों के प्रसिद्ध प्रसिद्ध पुरुष उस समय अहमदाबाद में उपस्थित थे और सरकार ने भी उन लोगों को महात्माजी का दर्शन करने की आज्ञा दे रखी थी, परन्तु महात्माजी को जेल तक पहुंचाने की आज्ञा दो तीन ही मनुष्यों को मिली थी। उनमें से एक श्रीमती सरोजिनी नायडू भी थीं। जेल के भीतर पांच बजे शाम तक वे लोग महात्माजी के पास थे। पांच बजे साथ में आये हुए लोगों को बाहर जाने की आज्ञा हुई तब श्रीमती नायडू ने महात्मा जी से विदा माँगी। उस समय महात्मा जी ने इनसे यही कहा था कि—

"भारत की एकता का भार मैं तुम्हारे हाथों सौंपता हूं।"

यह घटना स्वयं श्रीमती नायडू ने मद्रास के त्रिचूर स्थान पर अपने व्याख्यान में बतायी थी। श्रीमती नायडू की हिन्दू-मुसलिम ऐक्य स्थापन की योग्यता और सदिच्छा का इस से बढ़िया प्रमाण और क्या हो सकता है।

शर्तबन्द कुलीप्रथा।

कुछ ही वर्षों पहले किस प्रकार आरकाटी लोग हमारे ग़रीब भाइयों और बहिनों को तरह तरह के प्रलोभन देकर बहकाते और फिर उन्हें चुराकर फिजी आदि देशों को कुली बनाकर भेज देते थे और किस प्रकार मारीशस या मिर्च के टापू, फिजी आदि में उन पर राक्षसी अत्याचार वहां के गोरे

किया करते थे, यह सब सभी को मालूम है। आश्चर्य तो यह है कि यह सब अत्याचार और शर्त्तबन्द कुलीप्रथा यद्यपि एक प्रकार की गुलामी के पट्टे के समान ही थी तो भी बहुत वर्षों तक उस अंग्रेज़ी राज्य के भीतर भारत में वह प्रचलित रही जो संसार से गुलामी का अन्त करने का दावा करती रहती है! जानने वाले जानते हैं किस प्रकार शर्त्तबन्द कुलियों के ऊपर मिर्च के टापू आदि उपनिवेशों में गोरों के जघन्य राक्षसी अत्याचार होते थे और किस प्रकार वहां बहका कर पहुंचायी हुई भारतीय स्त्रियों के सतीत्व का नाश किया जाता था। श्रीमती नायडू भला अपनी बहिनों पर किये जानेवाले उन राक्षसी अत्याचारों को कैसे सहन कर सकती थीं? इसीसे हम देखते हैं कि जिस समय शर्त्तबन्द कुली प्रथा मिटाने के लिये भारत में और इंगलैण्ड में नेताओं ने घोर आन्दोलन किया था उस समय श्रीमती नायडू ने भी अपनी सारी शक्ति इस ओर लगा दी थी। लखनऊ की १९१६ वाली कांग्रेस के बाद ही श्रीमती नायडू ने इलाहाबाद में शर्त्तबन्द कुलीप्रथा के विरुद्ध जो ज़ोरदार भाषण किया था उसमें इन्होंने कहा था कि, "तुम्हें उस अपमान को बहुत जल्द मिटा देना चाहिये जो तुम्हारी ललनाओं को विदेशों में सहने पड़ते हैं। आज उनके सम्बन्ध की जो बातें तुमने सुनी हैं उन से अवश्य ही तुम्हारी हृदयाग्नि धधक उठी होगी। भारत के पुरुषो! उस आग को शर्त्तबन्द कुलीप्रथा को चिताग्नि बना दो। जो शब्द आज मेरे मुँह से निकले हैं वे शब्द नहीं, मेरे नेत्रों के आंसू हैं, क्यों कि मैं एक स्त्री हूं और यद्यपि आप लोगों को भी अपनी माताओं और बहनों की बेइज़्ज़ती

अखरती है किन्तु मेरी स्त्री जाति की जो बेइज़्ज़ती की जाती है उसे मैं अपनी बेइज़्ज़ती समझती हूं।" अपने इस व्याख्यान में सती सीता और रानी पद्मावती से लेकर श्रीमती गाँधी तक का दृष्टान्त देते हुए श्रीमती नायडू ने अन्त में कहा कि, "जब भारत के पुरुष चुपचाप बैठकर ऐसे पाप कार्य देख रहे हैं तब राष्ट्रीय सदाचार कैसे सम्भव है।"

उपनिवेशों के अन्याय।

दक्षिण अफ्रिका के ट्रांसवाल, नेटाल आदि तथा अन्य उपनिवेशों में भारतीयों के साथ जो अन्याय किये जाते हैं और उन्हें वहां के निवासियों के समान अधिकार नहीं दिये जाते हैं, इन बातों से श्रीमती सरोजिनी नायडू को जो महान् खेद होता है उसका सब से बढ़िया सबूत यही है कि न केवल भारतवर्ष की कितनी ही सभाओं में उन्हों ने उपनिवेशों के अन्यायों और अत्याचारों की निन्दा की है बल्कि उपनिवेशों में जाकर इन्होंने वहां के भारतीयों में राष्ट्रीय जागृति पैदा करने और गोरों के अत्याचारों के विरुद्ध सत्याग्रह करने का उपदेश किया है। केनिया में प्रवासी भारतीयों के विरुद्ध कुछ समय से एक ऐसा क़ानून बनाने का विचार हो रहा है जिसके द्वारा वहां के भारतीयों को गोरों की बस्ती से अलग बसना और एक निश्चित सीमा के ही भीतर व्यापार करना पड़ेगा। नये व्यापार के लिये और नई ज़मीनें खरीदने के लिये एक प्रकार की रुकावट सी हो गयी है। उस क़ानून के विषय में महात्मा गांधी के उस पत्र का अनुवाद हम यहां दे देना अप्रासंगिक नहीं समझते जो उन्हों ने बिल के विरुद्ध डढ़ वर्ष पहले प्रकाशित कराया था। यह

वक्तव्य महात्मा जी ने उस समय प्रकाशित कराया था जब वे जेल से ता छूट गये थे लेकिन अस्पताल में हो थे। वह वक्तव्य इस प्रकार है —

पूना, १४ फरवरी।

दक्षिणी अफ्रिका के एशियाई विरोधी आन्दोलन, विशेष कर 'क्लास एरिया बिल' के कारण, जिस पर इस समय यूनियन सरकार विचार कर रही है, सब लोग वहां की स्थिति जानना चाहते होंगे। इसलिये मैं अपना मत प्रकट करना अपना कर्त्तव्य समझता हूं। दक्षिणी अफ्रिका के गोरों का यह एशिया-विरोधी आन्दोलन नया नहीं है। जबसे हिन्दुस्तानियों ने वहां आबाद होना शुरू किया तभी से गोरों का यह आन्दोलन चल रहा है। वर्त्तमान आन्दोलन १६२१ से चल रहा है और 'क्लास एरिया बिल' उसी का परिणाम है। यह बिल १६१४ ई० के समझौते के विरुद्ध है। वह समझौता गोरों और हिन्दुस्तानियों द्वारा किया गया था, पर उसे दोनों की सरकारें भी भली भाँति जानती थीं। यहां तक कि भारत सरकार ने बेंजमिन राबर्ट को इसी वास्ते दक्षिण अफ्रिका भेजा था और वे वहां की सरकार का भारत सरकार के पास यह सन्देशा ले आये थे कि फिर दक्षिण अफ्रिका में कभी एशियाइयों के विरुद्ध क़ानून न बनेगा। उस समझौते का मतलब यही था कि धीरे धीरे एशियाई-विरोधी क़ानून रद्द कर दिये जायँगे। किन्तु काम उसके बिल्कुल ख़िलाफ हुआ। जनता को मालूम रहे कि उस समझौते का उल्लंघन सब से पहले ट्रांसवाल में हुआ। किन्तु इस (क्लास एरिया) बिल ने भारतीयों की स्वाधीनता का बिल्कुल अपहरण कर लिया। १६१४ के समझौते की अन्य बातें पूरी हों या न हों

परन्तु कम से कम यह वादा तो ज़रूर पूरा होना चाहिये कि भारतीयों की स्वाधीनता में बाधा डालनेवाले दूसरे क़ानून न बनेंगे। मैं समझता हूं कि दक्षिणी अफ्रिका के गवर्नर उस समझौते के अनुसार उस क़ानून को नामंजूर करने को वाध्य हैं। ऐसा करने का उन्हें अधिकार भी है। हमें यह भी न भूलना चाहिए कि यूनियन सरकार वहां के गोरे निवासियों को इच्छा के विरुद्ध कर्म करने का साहस आसानी से नहीं कर सकती। दक्षिणी अफ्रिका और केनियां की सरकारें कहां तक नैतिक बल रखती हैं, यह शीघ्र ही देखने में आयगा।

'क्लास एरिया' बिल से उन प्रान्तों के भारतीय, गोरों की बस्ती से अलग बसने और व्यापार करने के लिये मजबूर किये जायेंगे। ट्रांसवाल सरकार द्वारा १८८५ के बनाये हुए क़ानून की इसे पुनरावृत्ति समझनी चाहिये। भारतीयों को क़ानूनन अलग बसाने का कुछ भी मतलब अगर है तो यही कि वे देश से निकलने का मजबूर हों, क्योंकि इस तरह व्यापार बन्द हो जाता है। अन्त में मैं कहना चाहता हूं कि दक्षिणी अफ्रिका में भारतीयों को प्रवेश करने का अधिकार जब था तब गोरों ने शोर मचाया कि दक्षिणी अफ्रिका हिन्दुस्तानियों से ही भर जायगा और यह भारतीयों की ही बस्ती हो जायगी। अन्त में उन्होंने उस समय तक चैन नहीं लिया जब तक १८९७ ई० में 'प्रवेश निषेध' का क़ानून नहीं बन गया। अब अलग बसाने का शोर मचाया जा रहा है। इसके बाद दक्षिणी अफ्रिका से ज़बर्दस्ती भारतीयों को निकाल बाहर करने का शोर मचाया जायगा। सच तो यह है कि जैसे जैसे उनका पैर फैलता जाता है वैसे वैसे वे एशियाई-विरोधी माँगें बढ़ाते जाते हैं।

एम० के० गांधी
सेसून अस्पताल–पूना।

दक्षिण अफ्रिका और केनियाँ की दशा अपनी आंखों देखने को श्रीमती नायडू १९२४ ई० के प्रारम्भ में वहाँ गयी थीं। और भिन्न भिन्न प्रान्तों का दौरा करके प्रवासी भारतीयों के कर्त्तव्य बताये थे। जब ये वहां थीं तब केनियां के प्रवासी भाइयों को यह सन्देशा दिया था कि अपना युद्ध जारी रखें, कर न चुकावें और वर्त्तमान निस्सहाय स्थिति में महात्मा गाँधी के आदेशानुसार कार्य्य करें। उनके व्याख्यानों का ऐसा प्रभाव हुआ कि केनियाँ के प्रवासी भारतीयों ने असहयोग का अन्दोलन शुरू कर दिया और लोगों ने पोल टैक्स देने से इनकार कर दिया। इससे मोम्बासा और नैरोबी के भारतीयों के विरुद्ध सैकड़ों सम्मन जारी हुए। प्रवासियों के नेता श्रीयुक्त देसाई भी न बचे। असहयोग आन्दोलन का एक बड़ा कारण यह भी था कि मत दाताओं की नयी सूची जो उसी समय प्रकाशित हुई थी उसमें मुश्किल से एक दो भारतीयों के नाम थे। पीछे जोहान्सबर्ग जाते समय एक पत्र-प्रतिनिधि से श्रीमती नायडू ने कहा था कि मुझे पूर्ण विश्वास है कि प्रवासी भाई अपने आन्दोलन में पूर्ण रूपसे सफल होंगे क्योंकि सम्पूर्ण भारत उनका साथ देने को तैयार है। दक्षिणी अफ्रिका के गोरे शासकों से भारतीय कुछ भी आशा नहीं रख सकते क्यों कि चाहे जो भी दल शासनभार ग्रहण करेगा वह गोरों के दबाव के कारण कुछ न कर सकेगा।

प्रोटोरिया के भाषण में श्रीमती नायडू ने कहा था कि मैं दक्षिणी अफ्रिका में किसी प्रकार का राजनीतिक व्याख्यान देने नहीं आयी हूं, बल्कि आयी हूं इस वास्ते कि उन कारणों को जानूं जिन से यहां इतना झगड़ा हुआ करता है। मैं हिन्दुस्तानियों की ओर से आयी हूं। मैं यही सन्देशा

लायी हूं कि यदि सम्भव हो तो साम्राज्य के अन्दर और नहीं तो आवश्यक होगा तो उसके बाहर रहना पड़ेगा। साम्राज्य विषयक यह प्रश्न दक्षिणी अफ्रिका हल करेगा। मैंने केनियाँ स्थित अपने भाइयों को सलाह दी है कि वे कभी नीच होकर न रहें। मैं 'क्लास एरिया बिल' का स्वयं अध्ययन करना चाहती हूं। मैं न्याय चाहती हूं। किसी से रियायत नहीं चाहती। हिन्दुस्तानियों के साथ बिल्कुल समानता का व्यवहार होना चाहिये।"

जब श्रीमती नायडू नेटाल में थीं तब महात्मा गांधी ने उनके द्वारा प्रवासी भाइयों के पास जो सन्देशा भेजा था उसमें कहा था कि 'क्लास एरिया बिल' स्वीकार कर भारतीय अपनी राजनीतिक आत्महत्या नहीं करना चाहते।

सरकार सावधान हो जाय।

दक्षिण अफ्रिका में श्रीमती नायडू के व्याख्यानों से बड़ी हलचल मच गयी थी। वहां ये किस तरह स्पष्ट बातें कहती थीं इसका नमूना उनका वह व्याख्यान है जो इन्हों ने सन् १९२४ की २२ वीं मार्च को केपटाउन नगर में दिया था। उसमें इन्हों ने कहा था कि "अंग्रेज़ी में मैं इस वास्ते व्याख्यान देती हूं जिसमें मेरी बातें सरकार तक पहुंचे। मैं सरकार को सावधान किये देती हूं कि अगर तुम हमारे ऊपर अत्याचार करते रहोगे तो हम तुम्हारे साम्राज्य को त्याग देंगे। अगर हम ऐसा कर देंगे तो तुम्हारा साम्राज्य कहां रहेगा? भारत में भी हमें अंग्रेज़ों ने सताया है और नीचे कर रखा है। किन्तु अब महात्मा गांधी ने अपने अनुयायियों के हृदयों में जो उत्साह भर दिया है वह दबाया नहीं जा सकता। कुछ ही

हज़ार अंगरेज़ों ने भारतीय जनता को ग़ुलाम बना रखा है किन्तु अब भारतीय अपने अधिकारों के लिये खड़े हो गये हैं और अपने ऊपर अत्याचार करनेवालों के विरुद्ध अड़ रहे हैं। हम लोगों ने अंग्रेज़ी कपड़ों का बहिष्कार करने के लिये भारत में खद्दर बुनने का राष्ट्रीय व्यवसाय शुरू कर दिया है। महात्मागांधी कहते हैं कि अगर यह राष्ट्रीय व्यवसाय बन जाय और लोग चर्खा चलाना सीखलें तो मैंचेस्टर की बहुत सी मिलें बन्द हो जायेंगी। हमें अपने स्वत्वों के लिये अवश्य लड़ना चाहिये। याद रखो कि तुम कोढ़ियों के समान सबसे अलग रखे जा रहे हो। कहा जाता है कि यह भेदभाव जनक ऐक्ट काम में न लाया जायगा। परन्तु जब तक जेनरल स्मट्स* की मर्ज़ी होगी तभी तक वे तुम्हें यहां रखेंगे और जब तुम्हारा काम न देखेंगे तभी तुम्हें यहां से निकल जाने के लिये कह देंगे। अन्त में इन्हों ने जेनरल स्मट्स को चेतावनी दी कि जब ट्रांसवाल और नेटाल में हमारे भाई पीड़ित किये जा रहे हैं तब आप घूस देकर हमारा मत नहीं प्राप्त कर सकते।

दक्षिण अफ्रिका का दौरा समाप्त करने के पश्चात् श्रीमती नायडू वहां के चारों प्रान्तों के प्रतिनिधियों के साथ इंगलैण्ड पहुंचीं। लंडन में उनके जो व्याख्यान हुए उनमें इन्हों ने रंग-भेद भुलाकर समानता और बन्धुत्वके सिद्धान्तपर ज़ोर दिया।

दक्षिण अफ्रिका के प्रवासी भारतीयों में श्रीमती नायडू का इतना अधिक प्रभाव है कि उन्होंने १९२४ ई० में मोम्बासा में हुई अपनी दक्षिण अफ्रिका भारतीय काँग्रेस की सभा-नेत्री श्रीमती नायडू को चुना था। उसके लिए श्रीमती नायडू वहां गयी थीं और अत्याचारों और अन्यायों के विरुद्ध घोर

*ट्रांसवाल का प्रधान मंत्री।

आन्दोलन किया था। यह पुस्तक लिखने के समय तक श्रीमती नायडू दक्षिण अफ्रिका भारतीय कांग्रेस की सभानेत्री हैं। अभी हाल में ही अपने इस पद की हैसियत से उन्हों ने गत ११ वीं अक्टूबर १९२५ को भारत भर में अफ्रिका के प्रवासी भारतीयों का दिवस मनाने और वहां की सरकार के अन्यायों के विरुद्ध आवाज़ उठाने की घोषणा की थी जिसके अनुसार देश भर में उक्त दिवस मनाया गया था।

मलाबार के अत्याचार।

देशके भीतर अनेक स्थानों में समय समयपर जो अत्याचार और अनाचार होते रहे हैं उनकी ओर भी सबसे पहले श्रीमती नायडू का ध्यान जाता रहा है। सन् १९२२ ई० में जब मद्रास के मलाबार प्रान्त में मोपला-उपद्रव हुआ था उस समय मोपलों का दमन करने के लिये जो सेना वहां भेजी गयी थी उसने बड़े बड़े अत्याचार किये थे। यहां तक निर्दयता दिखाई गई थी कि सैकड़ों मोपला क़ैदी एक ही ट्रेन में ऐसे बन्द कर दिये गये थे कि रास्ते में ही अधिकांश का दम घुट गया था। इस तरह काल कोठरी का भयंकर दृश्य इस अंग्रेज़ी राज्य के भीतर और इसी के अफ़सरों द्वारा, स्वतंत्रता के इस युग में एक बार फिर देखने में आ गया था। यद्यपि कलकत्त की कालकोठरी के अत्याचार की निन्दा करते करते आज तक हमारे भाग्यविधाता नहीं थकते हैं। मोपलों पर किये हुए अत्याचारों के विरुद्ध आवाज़ उठाने के लिए श्रीमती नायडू सुप्रसिद्ध भारत-हितैषी मि० सी० एफ० एंड्रूज़ के साथ मलाबार पहुंचीं और वहां की दशा अपनी आँखों देखने तथा अच्छी तरह घटनाओं की जांच करने के पश्चात इन्हों ने

१९२२ के मार्च महीने में कालीकट में एक ज़ोरदार व्याख्यान देकर मोपलों के प्रान्त में सेना के अत्याचार पूर्ण बर्त्तावों की घोर निन्दा की। इतना ही नहीं इन्हों ने सैनिकों के उन राक्षसी कृत्यों के दृष्टान्त भी दिये जो मानव हृदय को दहला देने वाले थे। जिस समय श्रीमती नायडू के उस व्याख्यान की रिपोर्ट अन्य प्रान्तों में पहुंची, उससे बड़ी हलचल पैदा हो गई। मद्रास सरकार ने झट एक घोषणापत्र प्रकाशित करके श्रीमती नायडू के उस व्याख्यान पर आपत्ति की और कहा कि अगर वे अपने कथनों को वापस लेकर माफ़ी न मांगेंगी तो उन पर मामला चलाया जायगा। श्रीमती नायडू ऐसी धमकियों से कब डरने वाली थीं। इन्होंने जवाब दिया कि जितनी बातें व्याख्यान में कही गई हैं उन सब के काफ़ी सबूत मेरे पास हैं और मेरे साथ मलाबार आये हुए मि० सी० एफ० एंड्रूज़ और डा० हार्डीकर भी इन बातों की सचाई के गवाह हैं। उधर केराला प्रादेशिक कांग्रेस कमेटी के सेक्रेटरी ने भी सरकार से ललकार कर कह दिया कि श्रीमती नायडू ने अपने व्याख्यान में जो बातें कही हैं वे सब उन सूचनाओं के आधार पर हैं जो मैंने उन्हें दी थीं। मि० एंड्रूज़ ने भी अपने वक्तव्य में उनका समर्थन किया। तब तो मद्रास सरकार को मुँह की खानी पड़ी और चुपकी साधने के सिवा उसे और कोई मार्ग ही नहीं दिखाई पड़ा। मद्रास सरकार की यह दशा देख श्रीमती नायडू ने व्याख्यान में कही हुई अपनी बातें फिर दुहराईं और सरकार से कहा कि मेरे व्याख्यान के सम्बन्ध में तुमने जो घोषणापत्र प्रकाशित किया है या तो उसे वापस लो या अपनी धमकी के अनुसार मुझपर मुक़दमा चलाओ। मद्रास सरकार से दो में से

एक भी करते न बना क्योंकि उसने समझा होगा कि घोषणा-पत्र वापस लेने से बड़ी भद्द हो जायगी और रौब में बट्टा लगेगा और मुक़द्दमा चलाने से सफलता न होगी क्यों कि जो बातें कही गई हैं उनके प्रमाण हैं। इस तरह श्रीमती नायडू की वे बातें अकाट्य रहीं और इस घटना से उनकी कीर्ति और भी फैल गई।

श्रीमती नायडू की कांग्रेस-सेवा।

श्रीमती सरोजिनी नायडू के अब तक के जीवन से सम्बन्ध रखनेवाली अनेक घटनाओं का उल्लेख तो ऊपर किया जा चुका है। परन्तु महात्मा गांधी के असहयोग आन्दोलन में उन्हों ने जो प्रमुख भाग लिया उसके विषय में अभी बहुत कुछ लिखना बाक़ी है। जैसा हम पहले लिख आये हैं, श्रीमती नायडू १९१५ ई० के पहले कांग्रेस में सम्मिलित नहीं हुई थीं। परंतु जब से वे कांग्रेस में सम्मिलित हुई हैं तबसे हमारी समझ से तो इन्होंने प्रायः प्रत्येक कांग्रेस में भाग लिया है। अगर किसी कांग्रेस में ये न पहुंच सकी होंगी तो उसका कारण भी अनिवार्य रहा होगा। प्रत्येक कांग्रेस में सामयिक महत्व के प्रस्तावों पर श्रीमती नायडू के भाषण बड़े ही रोचक और प्रभावपूर्ण होते हैं इसके कहने की कोई आवश्यकता नहीं जान पड़ती। सन् १९१६ को कांग्रेस लखनऊ में हुई थी। उसमें इन्होंने स्वराज्य के प्रस्ताव का समर्थन बड़े ज़ोरदार व्याख्यान द्वारा किया था। इसी प्रकार दूसरे वर्ष कलकत्ते की कांग्रेस में भी इन्होंने स्वराज्य के प्रस्ताव का समर्थन किया था। उसी समय मुसलिम लीग में अली भाइयों के छुटकारे के लिये रखे हुए प्रस्ताव पर इन्होंने

जो भाषण दिया था वह सुनने ही योग्य था। बीजापुर में हुई बम्बई प्रादेशिक कानफरेंस में इनका व्याख्यान स्त्रियों के लिये मताधिकार वाले प्रस्ताव पर हुआ था। १९१८ ई० में कांजीवरम में मद्रास प्रादेशिक कानफरेंस हुई थी जिसकी सभानेत्री श्रीमती नायडू ही चुनी गई थीं। उस हैसियत से दिया हुआ इनका व्याख्यान बहुत ही प्रभावशाली था। उसमें इन्होंने कविके कर्त्तव्य के विषय में इस प्रकार अपने विचार प्रकट किये थे—

"कितनी ही बार प्रश्न किया जाता है कि कविता की मधुर मुरली बजाना छोड़कर मैंने राष्ट्र को युद्धक्षेत्र में पदार्पण कराने के वास्ते बिगुल बजाना क्यों पसन्द किया? इसका कारण यह है कि कवि का कर्त्तव्य केवल यही नहीं है कि एकान्त में लम्बी चौड़ी कल्पनाओं में ही चूर रहे, बल्कि उसका स्थान देशवासियों के बीच में है। युद्ध के कठिन मार्गों में ही कवि का भाग्य होता है। उसके कवि होने का एक हेतु यह भी है कि सङ्कटकाल में और हार तथा निराशा के समय उसे कल्पनाकारी से कहना चाहिए कि 'अगर तुम्हारी कल्पना सच्ची है तो सब कठिनाइयां, सब प्रपंच और निराशा यह सब केवल माया है, आशा ही सब कुछ है। यहां मैं आप के सामने आप की उच्चतर कल्पनाओं, आपके अदृश्य साहस और अदम्य विजयों को साथ लिये खड़ा हूं।' इसी लिये आज युद्ध की इस घड़ी में, जब भारत के लिए विजय लाभ करना आपके हाथ में है, मैं एक अबला अपने घर से बाहर निकल पड़ी हूँ। कवि कल्पनाओं में चूर रहने वाली मैं अबला खुले मैदान में निकलकर कहती हूं कि "भाइयो आगे बढ़ो और विजय प्राप्त करो।"

सन् १९१८ ई० के सितम्बर महीने में बम्बई में पहले ही

पहल कांग्रेस का विशेष अधिवेशन पटने के मि० हसनइमाम की अध्यक्षता में हुआ। वह अधिवेशन कांग्रेस के इतिहास में अपना एक विशेष स्थान रखता है। उसके पहले कांग्रेस वर्ष भर में केवल एक बार (दिसम्बर महीने में) हुआ करती थी। लेकिन नौकरशाही की वर्षों की घोर दमन नीति के पश्चात जब तत्कालीन भारत मन्त्री मि० मांटेगू ने वायसराय लार्ड चेम्सफोर्ड के साथ मिलकर सुधारों का एक खिलौना तैयार किया, जिससे भोले भाले भारतीय एक बार फिर भुलावे में पड़कर कम से कम जर्मन महायुद्ध तक तो शान्त होकर बैठ रहें, तब उनकी प्रकाशित की हुई सुधार स्कीम पर विचार करने के लिए शीघ्र ही कांग्रेस का विशेष अधिवेशन करने की आवश्यकता प्रतीत हुई। उस स्कीम के बारे में भारत के नेताओं में घोर मत भेद पैदा हो गया था। जो नरमदली नेता मि० मांटेगू की मधुर मुरली के स्वर से मुग्ध हो उनके दिलाये प्रलोभनों में फँस गये थे वे तो उन के प्रस्तावित सुधारों को धन्यवाद सहित ग्रहण करके चुप बैठ रहने की राय ज़ाहिर करने लगे, जिससे सरकार भारत की ओर से निश्चिन्त हो कर अपनी कुल शक्ति और ध्यान जर्मन शत्रु को हराने में लगा सके। परन्तु राष्ट्रीय दल के नेताओं में भी थोड़ी देर के लिए दो दल होते प्रत्यक्ष दिखाई पड़े। मिसेज़ बेसेंट ने तो मांटेगू स्कीम के जन साधारण के सामने पहुंचने के साथ ही अपने 'न्यू इंडिया' पत्र द्वारा यह स्पष्ट घोषणा कर दी कि उसमें जिन सुधारों का प्रस्ताव किया गया है वे ब्रिटेन के लिये देने और भारत के लिये ग्रहण करने के अयोग्य हैं। इसलिये उन्हें एकदम अस्वीकार कर देना चाहिये। परन्तु भारतवासियों के हृदय-सम्राट

तिलक महाराज ने यह राय ज़ाहिर की कि जो सुधार दिये जा रहे हैं इनसे हमारा सन्तोष कदापि नहीं हो सकता। इसलिये जो मिले उसे लेकर स्वराज्य की अपनी बाक़ी माँग के लिये और भी प्रचंड आन्दोलन करना चाहिये। कांग्रेस में राष्ट्रीय दल का ही प्रत्यक्ष प्राधान्य देख नरमदली नेता तो उससे अलग होने लगे और दो एक के सिवा बाक़ी उस विशेष कांग्रेस से दूर हो रहे। श्रीमती नायडू उस स्पेशल कांग्रेस में सम्मिलित हुईं और यद्यपि उनका स्वास्थ्य उस समय बहुत ख़राब था जिससे वे बहुत अधिक भाग तो नहीं ले सकीं, तो भी उन्होंने स्त्रियों के लिये मताधिकार का प्रस्ताव उपस्थित किया और स्पष्ट कह दिया कि जब तक नये सुधारों में स्त्रियों को उचित मताधिकार नहीं दिया जायगा तब तक सुधार स्कीम से कदापि सन्तोष नहीं हो सकता। उन दिनों में श्रीमती नायडू का मत लोकमान्य तिलक से मिलता था।

इसके बाद भी ये सभी कांग्रेसों और अनेक प्रादेशिक कानफरेंसों में सम्मिलित होती रही हैं। बम्बई प्रादेशिक कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष पद से तो इन्होंने कुछ ही दिनों पहले इसलिये इस्तीफ़ा दिया था कि भारत के सभी प्रदेशों में इन्हें असहयोग का कार्य करना था।

श्रीमती नायडू का असहयोग कार्य।

जैसा पहले कहा जा चुका है, १९१९ के प्रारम्भ में जब महात्मा गांधी ने रॉलट ऐक्ट के विरुद्ध सत्याग्रह का आन्दोलन उठाया था तब श्रीमती नायडू सब से पहले उसमें भर्ती हुई थीं। इसका कारण कुछ तो इनकी असीम देशभक्ति और

मुख्य कारण इनकी गाँधी-भक्ति थी। १९१९ ई० में जब आल इंडिया होमरूल लीग डेपुटेशन के साथ ये इंगलैंड गयी थीं तब वहां पर इनके मन में बार बार यही प्रश्न पैदा होता था कि आज कौन ऐसा है जो भारत का नेतृत्व स्वीकार कर के उसे संभाल सकता है। अन्त में रॉलट ऐक्ट के विरुद्ध सत्याग्रह की घोषणा करनेवाले दक्षिण अफ्रिका के प्रसिद्ध सत्याग्रही वीर महात्मा गाँधी ही इन्हें भारत का नेतृत्व ग्रहण करने योग्य दिखाई पड़े और श्रीमती सरोजिनी नायडू ने हृदय से उन्हें अपना नेता स्वीकार कर लिया। तब से लेकर आज तक ये अनन्य भक्ति के साथ महात्माजी के नेतृत्व में कार्य कर रही हैं। श्रीमती नायडू महात्मा गाँधी को करुणा के अवतार उन महात्माओं की श्रेणी का समझती हैं जो मानव जाति के सेवक होगये हैं जैसे गौतम बुद्ध, चैतन्य, रामानुज और रामकृष्ण। महात्मा जी के बारे में इनकी धारणा है कि "हो सकता है कि ये उन महात्माओं के समान उच्च सिद्धि के अत्यानन्द को न पहुंचे हों, पर प्रेम की पराकाष्ठा, सच्ची सेवा और आत्म-त्याग तथा सन्यास के लिये अत्यन्त आवश्यक जीवन की सादगी में उन महात्माओं से महात्मा गाँधी कम नहीं हैं।" जिन महात्मा गाँधी के विषय में श्रीमती सरोजिनी नायडू की इतनी उच्च धारणा है यदि उनकी अनन्य भक्ति में इस प्रकार सब से आगे हैं तो इसमें आश्चर्य ही क्या है?

ख़िलाफ़त और पंजाब के अन्यायों के विरुद्ध और स्वराज्य के लिये उठाये हुए असहयोग आन्दोलन में श्रीमती नायडू ने महात्मा गाँधी का प्रारम्भ से लेकर अब तक अनन्य भक्ति के साथ नेतृत्व स्वीकार करके कार्य किया है। असहयोग

आन्दोलन का इतिहास जानने वाले जानते हैं कि किस तरह कलकत्ते की स्पेशल कांग्रेस में भारत के राष्ट्रीय दल के नेताओं तक ने महात्मा जी के असहयोग कार्यक्रम का घोर विरोध किया था, माडरेट नेता तो खुल्लमखुल्ला नौकरशाही से जा मिले थे। पीछे नागपुर कांग्रेस में यद्यपि वे ही विरोधी राष्ट्रीय दली नेता महात्माजी के झंडे के नीचे आ गये थे और असहयोग आन्दोलन में पड़कर उन्होंने असाधारण त्याग भी दिखाया और अनेकानेक कष्ट भी सहे थे। किन्तु यह बात भी किसी से छिपी हुई नहीं है कि महात्मा गान्धी के जेल चले जाने के पीछे वे ही नेता फिर किंकर्तव्यविमूढ़ हो गये और धीरे धीरे पुनः उसी राह पर आ गये जिस राह को पकड़ने की सलाह कलकत्ते की स्पेशल कांग्रेस को वे दे रहे थे। उन नेताओं के इस प्रकार असहयोग पथ से हटने के समय से अभी तक उनका वही रास्ता है, यह भी किसी से छिपा हुआ नहीं है। परन्तु श्रीमती नायडू ने अन्य राष्ट्रीय दली नेताओं के साथ न तो प्रारम्भ में ही असहयोग का विरोध किया और न महात्माजी की अनुपस्थिति में ही ये असहयोग पथ से विचलित हुई थीं। प्रारम्भ से ही ये महात्मा गांधी के असहयोग कार्यक्रम का समर्थन करती रहीं और तदनुसार इन्होंने अपना कैसरेहिन्द का पदक सरकार को लौटा दिया जिसका वर्णन पहले हो चुका है। १९२० की नागपुर कांग्रेस के बाद देश भर में असहयोग की जो प्रचण्ड लहर चली थी उसमें महात्मा गांधी को भगीरथ परिश्रम करना पड़ा था। कांग्रेस और ख़िलाफ़त कमेटियों की बैठकें भी बहुत जल्द जल्द होती थीं। महात्मा गांधी को असहयोग का मंत्र लोगों के कानों में फूँकने के लिये भारत भर का दौरा

करना पड़ा था। उस समय श्रीमती नायडू बराबर उक्त कमेटियों की बैठकों में सम्मिलित होती थीं और अनेक बार महात्मा जी के साथ ही साथ भ्रमण भी करती थीं। बम्बई अहाते में तो महात्माजी की अनुपस्थिति में श्रीमती नायडू ही श्रीयुक्त वल्लभ भाई पटेल के साथ असहयोग के सारे कार्यों का नियंत्रण करती थीं। जब महात्माजी ने बारदोली में सत्याग्रह करने की ठान ठानी थी तब श्रीमती नायडू भी सत्याग्रह के लिये क्षेत्र तैयार करने में असाधारण परिश्रम के साथ कार्य कर रही थीं। असहयोग कार्यक्रम में इस प्रकार लीन होने के कारण ही जब १९२२ ई० को ११ वीं मार्च को महात्मा गांधी को सरकार ने गिरफ्तार कर लिया तब श्रीमती नायडू को बड़ी निराशा हुई, क्योंकि उनके स्थान पर उपयुक्त सेनापति कोई दिखाई नहीं पड़ता था। जब तक महात्माजी पर मुक़दमा चला तब तक श्रीमती नायडू अनेक बार महात्माजी से जेल में मिलीं और १८ वीं मार्च को सज़ा सुना दी जाने के समय वे अदालत में उपस्थित थीं। सज़ा सुना दी जाने के बाद वे दो तीन आदमियों के साथ जेल तक गयी थीं। महात्माजी की सज़ा के बाद श्रीमती नायडू ने अपने एक व्याख्यान में घोषणा की थी कि अब से मेरी आवाज़ महात्माजी का सन्देशा सुनाने का ही काम करेगी। उसके अनुसार अस्वस्थ होने पर भी श्रीमती देश के अनेक स्थानों में जा जाकर प्रभावपूर्ण भाषणों द्वारा महात्मा गांधी के अहिंसात्मक असहयोग के सिद्धान्त का प्रचार करती रहीं।

श्रीमती नायडू की सीलोन यात्रा।

इस दौड़ धूप में श्रीमती नायडू का स्वास्थ्य इतना बिगड़

गया कि इन्हें अक्टूबर के प्रारम्भ में उसे सुधारने के लिये सीलोन की यात्रा करनी पड़ी। परन्तु सीलोन में भी उन दिनों राजनीतिक आन्दोलन ज़ोरों पर था इसलिये वहां वालों ने अनेक सभाओं में श्रीमती नायडू का व्याख्यान कराया जिससे वहां भी इन्हें आराम करने को समय नहीं मिल सका। सीलोन की राजधानी कोलम्बो में एक विराट् सभा वहां की राष्ट्रीय कांग्रेस के अध्यक्ष मि० एच० जे० सी० पेरीरा के सभापतित्व में हुई जिसमें 'भारत में पुनरुत्थान' विषय पर श्रीमती नायडू का भाषण हुआ। सभापति ने जिन शब्दों में श्रीमती का स्वागत किया था उन्हें हम यहाँ इसलिये देना उचित और आवश्यक समझते हैं कि उनसे महात्माजी के प्रभाव का पता चलता है। मि० पेरीरा ने कहा कि, "हम सीलोन को कांग्रेस वाले श्रीमती नायडू का स्वागत इस विचार से नहीं कर रहे हैं कि ये वर्तमान काल में भारत का सर्व श्रेष्ठ स्त्री कवि हैं। हम इस विचार से इनका स्वागत अवश्य करते हैं कि ये भारतीय पुनरुत्थान की स्त्री कवि हैं जिस तरह रवीन्द्रनाथ ठाकुर उसी आन्दोलन के पुरुष कवि हैं। उस पुनरुत्थान के आन्दोलन के पीछे जैसा आप सब जानते हैं, महात्मा गांधी हैं। श्रीमती सरोजिनी नायडू अपने को सगर्व महात्मा गांधी की शिष्य बताती हैं। ये तथा इनकी तरह अन्य लोग भारत के सर्व प्रधान आन्दोलन को सफलीभूत बनाने के उद्योग में लगे हुए हैं। उस आन्दोलन का आधार पशुबल और हिंसा नहीं है। वस्तुतः यह शान्तिपूर्ण आन्दोलन है जो भारतोद्धार के वास्ते किया जा रहा है। हमारा उस आन्दोलन में अनुराग इसलिये है कि हमारे उत्थान का स्वरूप भी बहुत कुछ भारतीय पुनरुत्थान के समान है।"

श्रीमती नायडू ने उस सभा में जैसा वाग्मितापूर्ण भाषण किया उसकी सराहना मुक्तकंठ से सभी ने की। अपने व्याख्यान में इन्होंने दिखाया कि किस तरह महात्मा गाँधी के पुकारने से भारत जाग पड़ा है और किस तरह उनके असहयोग कार्यक्रम को सफलता मिल रही है और उनके असहयोग आन्दोलन का दूर दूर के देशों में भी प्रचार हो रहा है। अन्त में श्रीमती नायडू ने कहा कि, "मेरे गुरू जेल में हैं। इस समय वे कार्यरत नहीं हैं लेकिन उनके किये उद्योग फल ला रहे हैं। भाग्य की बयार ने उनके हाथ के छींटे हुए बीजों को उड़ाकर समुद्र पार आपके इस मसाले और खजूर के द्वीप में पहुंचा दिया है। इस वास्ते मैं अपने गुरु, अपने नेता, अपने संत और अपने अध्यापक का एक सँदेशा आप लोगों को उसी तरह सुनाती हूँ जिस तरह महाराज अशोक ने आपके देश में अपना शान्ति का सँदेशा भेजा था जब कि भगवान बुद्ध की स्मृति भारत में मिट गयी आप लोग सीलोन में उनकी स्मृति बनाये हुए हैं। संगमित्र ने बोधी वृक्ष की जो एक डाल भारत से लाकर यहाँ रखी थी उसके बदले में मैं आप लोगों के ऐक्य रूपी अनाज की एक बाल अपने देशवासियों के लिये ले जाऊँगी और उन से कहूंगी कि, "देखो, सीलोनवासी भगवान बुद्ध का ऋण महात्मा गाँधी के समय में चुका रहे हैं जो स्वतंत्रता के लिये उपदेश कर रहे हैं।"

दक्षिण भारत में प्रचार।

सीलोन से लौटने पर श्रीमती नायडू ने मद्रास के अनेक नगरों में महात्मा गान्धी के असहयोग आन्दोलन के सम्बन्ध

में भाषण किया और बताया कि किस तरह समुद्र पार के छोटे से टापू सीलोन में महात्मा गान्धी के असहयोग सिद्धान्त का प्रचार हो रहा है। त्रिवेन्द्रम में विद्यार्थियों की सभा में महात्मा गांधी के सन्देशे के बारे में इन्होंने कहा कि "जैसे कई शताब्दी पूर्व बोधी वृक्ष के नीचे गौतम बुद्ध को ईश्वरीय ज्ञान मिला था और मानव-जाति का कष्टों से त्राण दिलाने के कारण वे बुद्ध कहलाये वैसा ही ज्ञान मेरे गुरू को मिला है जो कहते हैं—"मेरा शरीर तो यहां बन्दीगृह में है। मेरे देशवासियों को आत्म-स्वातंत्र्य प्राप्त हो।" २२ वीं अक्टूबर को श्रीमती नायडू ने जो व्याख्यान मद्रास में दिया था उसमें इन्होंने बताया था कि सीलोन में किस तरह असहयोग की लहर चल पड़ी थी।

असहयोग दल में फूट।

सन् १९२२ ई० में जिस समय महात्मा गांधी जेल में बन्द कर दिये गये और भारत की असहयोग सेना का संचालन करनेवाला कोई न रहा, क्योंकि पंजाब केसरी लाला लाजपतराय, देशबन्धुदास आदि सभी प्रमुख नेता जेलों में बन्द थे, तब जैसा स्वाभाविक ही था, असहयोग दल में एक प्रकार की फूट पैदा होने लगी। वह फूट वैसे तो सब से पहले महाराष्ट्र प्रदेश में ही प्रकट हुई, जहां के नेता पहले भी असहयोग कार्यक्रम के विरोधी थे और देश को महात्मा जी के ही साथ देखकर असहयोगी बन गये थे। किन्तु जो असहयोगी नेता जेल के बाहर थे उन्होंने देश भर में भ्रमण करके देशवासियों को महात्माजी के कार्यक्रम पर डटे रहने का उपदेश दिया। श्रीयुक्त पटेल, हकीम अजमल खां, श्रीमती

नायडू, त्यागमूर्ति पं० मोतीलाल नेहरू प्रभृति नेता बराबर असहयोग कार्यक्रम को ही पूरा करने का उपदेश करते रहे। लेकिन जब देशबन्धुदास जेल से छूट आये और उन्हों ने भी प्रकट रूप से असहयोग के कार्यक्रम के विरुद्ध कौंसिलों में घुसने का सर्थन किया तब माननीय नेहरू, श्रीमान पटेल और हकीम अजमल खां आदि नेताओं के भी विचार पलट गये और इन्हों ने भी कौंसिलों पर अधिकार कर लेने की राय का समर्थन कर डाला। आल इंडिया कांग्रेस कमेटी ने 'सिविल डिसओबिडेन्स कमेटी' (सविनय क़ानून भंग कमेटी) नाम से कई मेम्बरों की एक कमेटी नियुक्त की कि वह देश के प्रत्येक भाग की अवस्था की जांच करके रिपोर्ट दे कि देशवासी कहां तक सविनय कानून भंग करने के लिये तैयार हैं। परन्तु उस कमेटी के नियुक्त करने का मुख्य अभिप्राय यह जानना भी था कि कौंसिलों के भीतर घुसकर वहां सरकारी काम में अड़ंगा लगाने की नीति काम में लाने के पक्ष में लोग कहां तक हैं। उस कमेटी के मेम्बर हकीम अजमल खां, डा० अंसारी, पं० मोतीलाल नेहरू, श्रीयुक्त पटेल आदि थे। श्रीमती नायडू भी एक मेम्बर नियुक्त की गयी थीं लेकिन उन दिनों इनका स्वास्थ्य बहुत बिगड़ रहा था इसलिये कमेटी के कार्य में ये भाग नहीं ले सकी थीं। उस कमेटी ने देश के प्रत्येक प्रान्त का दौरा किया और प्रमुख पुरुषों के बयान लिये। अन्त में १९२२ के नवम्बर महीने के प्रथम सप्ताह में उस की रिपोर्ट प्रकाशित हुई जिसमें कमेटी के आधे मेम्बरों ने कौंसिलों में घुसकर पदपद पर सरकार के कामों में अड़ंगा लगाने की नीति ग्रहण करने की राय प्रकट की और आधे मेम्बरों ने कौंसिलों का बहिष्कार जारी

रखने के पक्ष में मत प्रकट किया। उस साल की कांग्रेस गया में होनेवाली थी जिसके सभापति देशबन्धुदास चुने गये थे। उन्हों ने भी कौंसिलों में जाकर अड़ंगा नीति काम में लाने के पक्ष का समर्थन किया। परन्तु श्रीमती सरोजिनी नायडू ने एक सच्चे असहयोगी की भांति उक्त रिपोर्ट प्रकाशित होने और उस पर हकीम अजमल खां, पं० मोती लाल नेहरू जैसे नेताओं की राय कौंसिलों में घुसने के पक्ष में देखकर भी अपना स्थिर मत कौंसिल प्रवेश के विरुद्ध ही प्रकट किया।

श्रीमती नायडू का कौंसिल-विरोध।

सिविल डिसओबिडियेंस कमेटी की रिपोर्ट प्रकाशित होते ही भारतीय समाचारों की एजेंसी एसोशियेटेड प्रेस के प्रतिनिधि से श्रीमती नायडू ने स्पष्ट कह दिया कि कौंसिलों में घुसना निश्चय ही अन्त में असहयोग के सिद्धान्त को भ्रष्ट कर देगा। चाहे वह घुसना सरकार के सहयोग के हिसाब से सहयोग करने के वास्ते हो या किसी अन्य प्रकार के सहयोग के लिये हो। श्रीमती का दृढ़ विश्वास था कि कौंसिलों में किसी भी तरह का प्रवेश सरकार की जीत और हमारी हार का द्योतक होगा। सिविल डिसओबिडियेंस कमेटी की रिपोर्ट के विषय में श्रीमती नायडू ने कहा कि "कौंसिलों का बायकाट उठा देने की जो सिफारश कमेटी की रिपोर्ट में की गयी है मैं उसके बिल्कुल ही विरुद्ध हूं। कारण, मेरा विश्वास है कि कौंसिलों का बहिष्कार ही असहयोग का वास्तविक केन्द्र है। जब मैं यह देखती हूं कि इस विषय में मेरा मत पं० मोतीलाल नेहरू, हकीम अजमल खां और श्रीयुक्त दास जैसे

प्रसिद्ध नेताओं के विचारपूर्ण मत से नहीं मिलता तो मुझे बड़ा दुःख होता है क्योंकि इन नेताओं ने जो देश की अनुपम सेवाएं की हैं उनके कारण ये सदा देशवासियों के सम्मान तथा विश्वास के अधिकारी हैं। किन्तु मेरा दृढ़ विश्वास है कि हमारे असहयोग कार्यक्रम के किसी भी मुख्य भाग में ढिलाई करने से चाहे अभी प्रत्यक्ष न दिखाई पड़े किन्तु अन्त में वह निश्चय ही सिद्धान्त को खंडित कर देगा। जो सुधारों को नष्ट करने के स्थान में खुद असहयोग के ही आदर्श को नष्ट भ्रष्ट कर देगा। मुझे मालूम है कि जो नेता कौंसिलों में घुसने की सलाह दे रहे हैं वे और भी अधिक ज़ोरों से असहयोग चलाने के उद्देश्य से ऐसी राय देते हैं कि जिस में देश में फिर स्फूर्ति और उत्साह की लहर उमड़ पड़े। परन्तु मेरा विश्वास तो यह है कि जिस राष्ट्र के वास्ते पराधीनता की लज्जा उत्तेजित करने के लिये काफी नहीं है और स्वतंत्रता की आशा जिसे प्रोत्साहित नहीं कर सकती और जो नित्य प्रति घोर परिश्रम करना अपना नित्य नियम नहीं बनाता वह राष्ट्र किसी प्रकार के स्वराज्य के योग्य नहीं है।"

पीछे २३ वीं नवम्बर को कलकत्ते में आल इंडिया कांग्रेस कमेटी की जो बैठक सिविल डिसओबिडियेंस कमेटी की रिपोर्ट पर विचार करने के लिये हुई उसमें श्रीमती सरोजिनी नायडू ने कौंसिलप्रवेश के प्रस्ताव का फिर विरोध किया और कहा कि, "जिस अधिक संख्या के लोगों को अपने बुद्धिविषयक तथा नैतिक दृढ़ निश्चय के विषय में विश्वास नहीं है उसके बहुपक्ष में होने की अपेक्षा मैं अदम्य अल्प पक्ष में रहना पसन्द करती हूं।"

श्रीमती नायडू की दूरदर्शिता।

असहयोग आन्दोलन का इतिहास जानने वालों को मालूम है कि हकीम अजमल खां पर महात्मा गांधी का इतना दृढ़ विश्वास था कि जेल जाते समय उन्हीं को वे देश का नेतृत्व करने का कार्य सौंप गये थे। त्यागमूर्ति पं० मोतीलाल नेहरू असहयोग आन्दोलन के प्रारम्भ से ही महात्मा जी के दाहने हाथ रहे हैं। इसके सिवा नेहरू जी ने एकमात्र महात्मा जी के उपदेश से अपने सारे राजसी सुखों पर लात मारकर देश के लिये भिखारी का जीवन धारण किया है जिससे वैसे भी उनके इस अनुपम त्याग ने उन्हें देशवासियों का श्रद्धास्पद बना दिया है। देशबन्धु दास के त्याग की तुलना में तो दूसरा कोई ठहर ही नहीं सकता जिसके कारण वे केवल बंगाल में ही नहीं भारत भर में पूज्य हो रहे थे। ऐसे ऐसे प्रसिद्ध और माननीय नेताओं ने यद्यपि असहयोग कार्यक्रम के विरुद्ध कौंसिलों में प्रवेश करने की राय दी थी तो भी श्रीमती नायडू उनके विरुद्ध ही रहीं। इन्होंने अपनी दूरदर्शिता से जो बातें उस समय कही थीं वे सब इस समय सत्य सिद्ध हो गयीं और कौंसिलों का बहिष्कार उठा देने से देश में पुनरुत्साह पैदा होने के स्थान में एक प्रकार की मुर्दनी छा गयी। जब भारत से इतनी दूर बैठे हुए भारतहितैषी मि० हार्नीमैन तक ने स्पष्ट कह दिया कि, "दास-नेहरू प्रोग्राम व्यर्थ और तत्वहीन है, इसलिये भारतवासियों को सत्याग्रह और असहयोग पर दृढ़ता से डटे रहना चाहिये," तब भारत की सारी अवस्था अपनी आंखों से देखती हुई श्रीमती नायडू और कर ही क्या सकती थीं?

गया कांग्रेस में।

१९२२ ई० में कांग्रेस का अधिवेशन स्वर्गीय देशबन्धु दास के सभापतित्व में हुआ था। उस समय कांग्रेस की असहयोग सेना के भीतर दो दल हो गये थे। बड़े बड़े नेता कौंसिलों में जाने के पक्षपाती बन गये थे और कुछ अप्रसिद्ध नेता ही महात्मा गांधी के असहयोग कार्यक्रम को ज्यों का त्यों बनाये रखने के पक्ष में थे। परन्तु नेताओं के सिवा जनता का अधिकांश तब भी अपरिवर्तनवादी ही था और नहीं चाहता था कि महात्मा गांधी तथा हज़ारों असहयोगियों के जेल में रहते हुए महात्मा जी के बताये हुए मार्ग को छोड़े। इसीसे गया कांग्रेस में श्रीमती नायडू ही अपरिवर्तनवादी दलका नेतृत्व कर रही थीं। इन पंक्तियों के लेखक को भी उस कांग्रेस में सम्मिलित होने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था जिससे इसने अपनी आंखों देखा था कि किस प्रकार गया की कांग्रेस के भीतर और उसके बाहर प्रतिनिधियों के कैम्पों के सामने श्रीमती नायडू अपने ज़ोरदार भाषणों द्वारा महात्मा गांधी के कार्यक्रम में किसी तरह का सिद्धान्त सम्बन्धी परिवर्त्तन न करने के लिये लोगों को समझाती थीं। वहां देशबन्धु दास और माननीय नेहरू जैसे नेताओं का भी प्रभाव जनता पर नहीं पड़ पाया, इसका मुख्य श्रेय श्रीमती नायडू ही को मिलेगा। जब तक महात्माजी जेल से वापस नहीं आ गये तब तक श्रीमती नायडू बराबर उनके असहयोग कार्यक्रम को सफल बनाने के उद्योग में लगी रहीं और स्वास्थ्य खराब होने पर भी दम नहीं लिया। जब बम्बई में आल इंडिया कांग्रेस कमेटी की बैठक करके कौंसिलों का बहिष्कार स्थगित करने का

निश्चय किया गया तब श्रीयुक्त राज गोपालाचार्य, बाबू राजेन्द्र प्रसाद आदि ने कांग्रेस की वर्किङ्ग कमेटी से इस्तीफा दे दिया। उन्हें ऐसा करते देख श्रीमती नायडू ने भी उस कमेटी से इस्तीफा देने में तनिक विलम्ब नहीं किया।

१९२३ ई० में नागपुर में राष्ट्रीय झंडे की रक्षा के लिये जो सत्याग्रह प्रारम्भ किया गया था उसका श्रीमती नायडू ने हृदय से समर्थन किया था और यदि अधिकारियों ने अपनी हार न मान ली होती तो श्रीमती नायडू उसमें भाग ले कर जेल जाने की घोषणा कर चुकी थीं।

कांग्रेस की सभा-नेत्री।

जिस समय बेलगांव कांग्रेस के सभापति पद के लिये उपयुक्त व्यक्तियों का प्रस्ताव किया जा रहा था उस समय महात्मा गांधी ने जिन दो व्यक्तियों के लिये राय दी थी वे थे डा० अनसारी और श्रीमती सरोजिनी नायडू। इन दो में भी महात्मा जी ने खास ज़ोर श्रीमती नायडू के लिये ही दिया था। परन्तु सभी प्रान्तवाले स्वयं महात्मा गांधी को ही चाहते थे इसलिये महात्मा जी को ही १९२४ को बेलगांव की अध्यक्षता स्वीकार करनी पड़ी। परन्तु दिन जाने ही को देर थी १९२५ की कानपुर कांग्रेस की सभानेत्री बहुत अधिक बहुमत से श्रीमता नायडू ही चुनी गयीं। १८ प्रान्तों में से १६ ने केवल देवी सरोजिनी को चुना इस तरह इतने वर्षों से असाधारण परिश्रम के साथ स्वार्थरहित देशसेवा का पुरस्कार भारतीय जनता ने श्रीमती नायडू को देकर अपने कर्त्तव्य का ही पालन किया। जनता के हाथ में किसी नेता का अधिक से अधिक सम्मान करने का जो

अधिकार है वह उसने श्रीमती नायडू के लिये प्रयोग करके अपनी कृतज्ञता का परिचय दे दिया। राष्ट्र के इस सम्मान का मूल्य इस बात से और भी बढ़ जाता है जब कि हम देखते हैं कि श्रीमती सरोजनी नायडू ही सर्व प्रथम भारतीय महिला हैं जिन्हें राष्ट्रीय कांग्रेस के सभापति का आसन सुशोभित करने का अवसर मिला है। नाना प्रकार के भीतरी अनैक्य के समय में इनका चुनाव बहुत ही समयोचित हुआ।

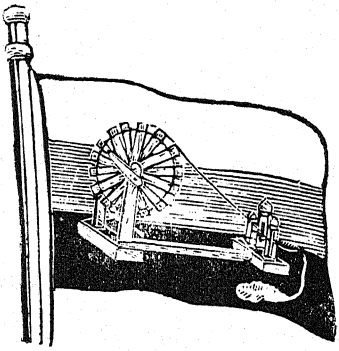

लेखक—श्री मातासेवक पाठक, दिसम्बर १९२५।
मुद्रक—भगवानदास गुप्त, कमर्शल प्रेस, कानपुर।
प्रकाशक शिवनारायण मिश्र वैद्य, प्रकाश पुस्तकालय, कानपुर।

प्रकाश-पुस्तक-माला

उक्त पुस्तक-माला हिन्दी संसार के गौरव की वस्तु है। १) एक रु० प्रवेश फ़ीस देकर माला के स्थायी ग्राहक हो जाने वालों को माला की सभी पुस्तकें पौने मूल्य में मिलती हैं। माला में प्रकाशित पिछली पुस्तकें लेना न लेना ग्राहक की इच्छा पर है किन्तु भविष्य में प्रकाशित होने वाली सभी पुस्तकें लेना आवश्यक है। मालाके अतिरिक्त दूसरे प्रकाशकों की पुस्तकों पर भी हम स्थायी ग्राहकों को एक आना फी रु० कमीशन सदा देते रहेंगे। तुरंत प्रवेश फीस भेज कर माला के स्थायी ग्राहक बनिए। हमारे यहां हिंदी के सभी अन्य प्रकाशकों की पुस्तकें सदा मिला करती हैं। सूचीपत्र मुफ़्त भेजा जाता है।

[माला में प्रकाशित उपन्यास]

गोरा (कविवर रवींद्र नाथ ठाकुर) ८२० पृष्ठ ३)

घर और बाहर, ३००, १।)

महाराज नंदकुमार को फाँसी २।)

बलिदान (ह्यूगो) सचित्र २)

बज्राघात (आपटे) २॥)

जर्मन जासूस की रामकहानी ।-)

युद्ध की कहानियाँ ।)

[माला के कुछ जीवनचरित्र]

सम्राट अशोक (सचित्र) १)

चेतसिंह और काशी का विद्रोह ।=)

श्री कृष्ण चरित्र ।=)

रूस का राहु रासपुटिन ।=)

उद्योगी पुरुष ।=)

देवी जोन ।=)

श्रीमती सरोजिनी नायडू ।=)

दादा भाई नौरोजी =)॥

रानाडे की जीवनी =)॥

[माला की राजनैतिक पुस्तकें]

भारतीय सम्पत्ति शास्त्र (सजिल्द) ५)

अकाली दर्शन (सचित्र) ॥।)

टाल्सटाय के सिद्धांत १।)

रूस की राज्यक्रांति (सचित्र, सजिल्द २॥)

चीन की राज्यक्रांति (सजिल्द) १॥)
एशिया निवासियोंके प्रति यूरोपियनों का बर्ताव (सचित्र) ।=)
भारत के देशी राष्ट्र ॥।)
फिजी में प्रतिज्ञाबद्ध कुली प्रथा (सजि०) १)
साम्यवाद ।=)
मेरे जेलकेअनुभव[गांधी] ।=)
फिली द्वीप में मेरे २१ वर्ष ॥)
भारतीय इतिहास में स्वराज्य की गूंज ।=)
कांग्रेस का इतिहास ॥-)
आयरलैण्ड में होमरूल ॥)
आयरलैण्डमें मातृभाषा ।=)
बीसवीं सदीका महाभारत॥।)
राजनीति प्रवेशिका ।=)
स्वराज्य पर मालवीयजी ।)
स्वराज्य पर सर रवींद्र ।)
चम्पारन की जांचरिपोर्ट ।-)
कलकत्ते में स्वराज्यकी धूम ।)

[माला के काव्य ग्रन्थ]

राष्ट्रीय वीणा भाग १ ॥=)
राष्ट्रीय वीणा भाग २ ॥)
त्रिशूल तरंग [त्रिशूल] ॥=)
सती सारंधा [सचित्र] ॥=)
कृषक क्रंदन [सनेही] ≡)
कुसुमाञ्जलि [सनेही] =)

[माला के नाटक]

मुक्तधारा (ले० कविवर रवींद्रनाथ ठाकुर) ॥=)
कृष्णार्जुन युद्ध नाटक ॥=)
भीष्म नाटक ॥)

[माला की सामाजिक पुस्तकें]

बहिष्कृत भारत ।)
हमारा भीषण ह्रास अर्थात् हिन्दुओ सावधान ।)

[माला का चित्र साहित्य]

बंदेमातरम् चित्राधार २)
व्यंग चित्रावली २)
तिलक चित्रावली २)

[माला की फुटकर पुस्तकें]

मेघनाथबध [माइकेल] ॥।)
शिक्षा सुधार [शिक्षा] ॥)
सितार शिक्षक ।=)
राजयोग [विवेकानंद] ।=)

पता— प्रकाश पुस्तकालय, कानपुर

बलिदान

[अनुवादक—प्रताप सम्पादक श्रीयुत गणेशशंकर जी विद्यार्थी]

यह पुस्तक फ्रांस के प्रतिभाशाली लेखक विक्टर ह्यूगो के प्रसिद्ध उपन्यास 'नाइन्ट्री थ्री' का स्वतंत्र अनुवाद है। यदि आप जानना चाहते हैं कि फ्रांस की प्रसिद्ध राज्यक्रांति कैसे हुई ? राज्य-क्रांति करनेवाली मूर्तियां कैसी थीं ? उस समय का पेरिस नगर कैसा था ? फ्रांस के राजा रानी को जनसभा ने फांसी पर क्यों लटका दिया, पूंजीपतियों को तलवार के घाट क्यों उतारा और राजशासन के स्थान पर प्रजाशासन कैसे स्थापित किया, तो इस पुस्तक को अवश्य पढ़िये। पुस्तक पढ़ते समय अनुभव होगा मानों आप स्वयं क्रांति के अन्दर विचरण कर रहे हैं। साढ़े तीन सौ पृष्ठ की सचित्र पुस्तक का मूल्य २) दो रुपया है।

महाराज नन्द कुमार को फाँसी

इस पुस्तक के लेखक हैं 'टाम काका की कुटिया' के लेखक स्वर्गीय चण्डी चरण सेन। यदि आप ईस्ट इंडिया कम्पनी के अंगरेज़ी शासन के घोर अत्याचारों का जीता जागता चित्र देखना चाहते हैं तो इस ऐतिहासिक उपन्यास को पढ़िये। पुस्तक पढ़ते पढ़ते आपके रोंगटे खड़े हो जायेंगे। लार्ड मेकाले का कहना है कि 'बंगाल में मुसलमानों के ज़माने में भी अत्याचार हुआ था पर

ऐसा भीषण अत्याचार कभी नहीं हुआ।' इसी भीषण अत्याचार की कहानी इस पुस्तक के पन्ने पन्ने में है। ५५० पेज की पुस्तक का मूल्य २॥) ढाई रुपया है।

कर्णार्जुन युद्ध नाटक

लेखक प्रसिद्ध हिन्दी कवि "कर्मवीर" के सम्पादक पं० माखन लाल चतुर्वेदी। चतुर्वेदी जी की कविताएं "भारतीय आत्मा" के नाम से प्रकाशित होती हैं। जिन लोगों ने आपकी कविताएं पढ़ी हैं, वे कह सकते हैं कि उनमें मुर्दा में भी जान डाल देने की ताक़त होती है। यह नाटक इन्हीं की लेखनी से निकला है। नाटक शिक्षाप्रद और प्रभावोत्पादक है और अब तक अनेक रंगमंचों पर खेला जा चुका है। मूल्य ॥=) दस आना।

वज्राघात

इसके लेखक हैं, मराठी के प्रसिद्ध उपन्यासकार स्वर्गीय पं० हरिनारायण आपटे, जिन्हें मराठी में वही स्थान प्राप्त है जो बंगला में बंकिमचन्द्र और रवीन्द्रबाबू को है। अनुवादक हैं हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक पं० लक्ष्मीधर वाजपेयी। इस उपन्यास से आपको पता लगेगा कि, किस तरह दक्षिण का विशाल हिन्दू साम्राज्य विजयनगर जो शताब्दियों से हिन्दू सभ्यता और वैभव का महान

केन्द्र था, राजा की विलासिता और अपने ही मुसलमान सर्दारों के विश्वासघात के कारण तथा आसपास के मुसलमानी राज्यों के षड़यंत्रसे नष्ट भ्रष्ट हो गया ! तथा मन्दिरोंके स्थानपर मसजिदें और दरगाहें खड़ी हो गईं । ५१२ पेज की सुन्दर छपी हुई पुस्तक का मूल्य २॥) ढाई रुपया है ।

[अनुवादक माधुरी सम्पादक पं० रूपनारायण पांडेय, कविरत्न]

यह एशिया के सर्वश्रेष्ठ कवि, साहित्य सम्राट् रवीन्द्रनाथ ठाकुर के प्रसिद्ध सामाजिक उपन्यास का हिन्दी अनुवाद है । अंगरेज़ी आदि कितनी ही भाषाओं में इसके अनुवाद प्रकाशित हो चुके हैं । सामाजिक उलझनों का तो खासा चित्र चित्रित किया गया है । इसके टक्कर का भारतीय भाषाओं में बिरलाही उपन्यास होगा । ८२० पेज की सजिल्द पुस्तक का मूल्य ३ तीन रुपया है ।

घर और बाहर

[अनुवादक—श्रीयुत रघुकुल तिलक एम० ए०]

यह साहित्य सम्राट् रवीन्द्रनाथ ठाकुर के संसारप्रसिद्ध उपन्यास 'घरे बाहिरे' का हिन्दी अनुवाद है । इंगलैंड, फ्रांस, अमेरिका, जर्मनी, जापान आदि सभी देशोंने इसके अनुवाद को प्रकाशित किया है । संसार के विद्वानों का मत है कि भाव-चित्रण और

कल्पना की उड़ान में रवि बाबू की श्रेणी का लेखक भारत में ही नहीं, संसार में बिरला ही मिलेगा। "घर और बाहर" में रवीन्द्र बाबू ने इस गुण का पूर्ण परिचय दिया है। ३०० पेज की पुस्तक का मूल्य १।) सवा रुपया है।

मुक्तधारा

[लेखक—कविसम्राट् रवीन्द्रनाथ ठाकुर]

इस नाटक के अनुवाद अंगरेज़ी आदि कई भाषाओं में प्रकाशित हो चुके हैं। इसके उच्चकोटि के होने का सब से बड़ा प्रमाण यह है कि इसे स्वयं रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने कई बार स्टेज पर खेला है। इसे देखने के लिये महात्मा गांधी भी एक बार रवीन्द्र बाबू के घर गये थे। इसका एक एक वाक्य भारत की वर्तमान अवस्था की प्रत्येक दशा पर घटित होता है। मूल्य ।=) दस आने।

सम्राट अशोक

इस इतिहासग्रंथ से आप जान सकेंगे कि सवा दो हज़ार वर्ष पूर्व हमारा चक्रवर्ती राज्य कैसा था? हम दूसरों पर किस प्रकार राज्य किया करते थे? उस समय के भारत की सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक दशा क्या थी? अशोक ने बुद्ध धर्म का प्रचार कैसे

किया ? यह ग्रंथ कितने ही प्रामाणिक ऐतिहासिक ग्रंथों के आधार पर लिखा गया है। इसमें मौर्य्य साम्राज्य के अभ्युदय से उसके अन्त समय तक का वर्णन है। पुस्तक में ५ ऐतिहासिक चित्र भी हैं। मूल्य १) एक रुपया।

चीन की राज्यक्रांति

चीन की क्या दशा थी ? उसे हड़प जाने के लिए बड़े २ देशों ने कैसी २ तैयारियां की थीं ? चीन में जागृत का युग कैसे आया ? राजसत्ता की जड़ें कैसे हिलीं और अन्त में प्रजासत्ता की कैसे स्थापना हुई आदि बातों का विस्तृत वर्णन बड़ी सरल और रोचक भाषा में किया गया है। सजिल्द पुस्तक का मूल्य १॥) है।

एशिया निवासियों के प्रति यूरोपियनों का बर्ताव

इसके पढ़ लेनेसे आपको पता लगेगा कि यूरोपवाले एशिया के लोगों को कितना तुच्छ समझते हैं और उन्हें कैसे पराधीन बनाये रखना चाहते हैं। इसमें पांच व्यंग चित्र हैं। मूल्य ।=) छः आने।

फिजी द्वीप में तेरह वर्ष

ले०—पं० तोताराम सनाढ्य। फिजी आदि द्वीप में प्रवासी भारतीयों की स्थिति कैसी है, वहाँ उन्हें कैसे कष्ट झेलने पड़ते हैं, कैसे कैसे अत्याचार सहन करते हैं, इन्हीं सब बातों का लेखक ने आँखों देखा वर्णन किया है। पढ़ते पढ़ते पाषाणहृदय भी द्रवीभूत हो जाता है। मू० ॥) आठ आने।

साम्यवाद

साम्यवाद क्या है ? उसकी उत्पत्ति और विकास कैसे हुआ ? इस समय उसका प्रचार कितना और कहां कहां है ? यह अच्छी तरह समझाया गया है । मूल्य ।=) छः आने ।

टाल्सटाय के सिद्धान्त

महात्मा गांधी टाल्सटाय के सिद्धान्तों के बड़े पक्षपाती हैं । पुस्तक के आरम्भ में महात्मा टाल्सटाय की संक्षिप्त जीवनी दी गई है तथा दो हाफ़टोन चित्र भी इसमें दिये गये हैं । २६० पेज की पुस्तक का मूल्य सिर्फ़ १।) सवा रुपया ।

मेघनादबध

बंगाल के स्वर्गीय कवि सम्राट् माइकेल मधुसूदनदत्त के 'मेघनाद बध' नामक पुस्तक का गद्यानुवाद । मू० ।।।) बारह आने ।

आयर्लैण्ड में होमरूल

आयर्लैण्ड वालों ने होमरूल का आन्दोलन कैसे किया उन्हें होम-

रूल के मार्ग में कैसे कैसे कष्ट झेलने पड़े, वे कहां कैसे सफल हुए, इन्हीं बातों का वर्णन प्रकाण्ड ग्रन्थों के आधार पर है। मूल्य ॥) आठ आने।

बीसवीं सदी का महाभारत

गत विकराल युरोपीय महायुद्ध का आरम्भिक इतिहास और संसार पर उससे पड़नेवाले महत्वपूर्ण आर्थिक और सामाजिक प्रभावों का इसमें विशद वर्णन किया गया है। मूल्य ॥।) बारह आने।

हमारा भीषण ह्रास अर्थात हिन्दुओ सावधान

भारत में ईसाई मिशनरी भोले भाले भारतीयों को धर्म्म के सत्यमार्ग से बहकाने के लिये क्या क्या उद्योग करते हैं, उनके बचने के क्या उपाय हैं, इन्हीं का इसमें वर्णन ज़ोरदार शैली में है। हिन्दू समाज के लिए यह एक ज़ोरदार चेतावनी है। मू० ।) चार आने।

राजनीति प्रवेशिका

यह पुस्तक राजनीति की आरम्भिक बातों को जानने की अद्भुत कुञ्जी है। राजनीति से सम्बन्ध रखनेवाले इस पुस्तक से अपूर्व लाभ उठा सकते हैं। मू० ।=) छै आने।

भीष्म नाटक

महाभारत के वीराग्रणी भीष्मपितामह का चरित्र-चित्रण इसमें इस खूबी के साथ लिखा गया है कि अनेक बार पढ़कर भी जी नहीं अघाता । भाषा सरल है । कई वार खेला जा चुका है । मूल्य ॥) आठ आने ।

फिजीमें प्रतिज्ञाबद्ध कुलीप्रथा

पुस्तक के लेखक हैं पं० बनारसीदास चतुर्वेदी, जिन्हें प्रवासी भारतीयों का बहुत अधिक ज्ञान है । यदि आप अपने प्रवासी भाइयों की दुर्दशा का विशद और प्रामाणिक वर्णन पढ़ना चाहते हैं तो, इसे अवश्य पढ़ें । सजिल्द पुस्तक का मूल्य १) ।

बहिष्कृत भारत

महात्मा गांधी का कहना है कि 'स्वराज्य का कोई अर्थ नहीं यदि हम भारत के पांचवें भाग (अछूतों) को सदा दासत्व में रखना चाहते हैं ।' इसमें अछूत जातियों के सम्बन्ध की सम्पूर्ण ज्ञातव्य बातें दी गई हैं । मू० ।) चार आने ।

देशभक्तों के पढ़ने योग्य पुस्तकें।

हिन्दुस्तान गुलाम कैसे बना--व्यापार के लिये आये हुए अँगरेज़ों ने ईस्ट इंडिया कम्पनी स्थापित कर किस प्रकार छल, कपट और कूटनीति की भयंकर चालों से भारतीय बादशाहों की स्वाधीनता हड़पकर देश को पराधीनता की बेड़ियों में जकड़ दिया इसी का रोमांचकारी वर्णन है। मूल्य २॥) ढाई रु०

क्रान्तिकारी राजकुमार--राजप्रासादों में पले हुए प्रिन्स क्रापटकिन क्रान्तिकारी क्यों बने? इसी का रोमाञ्चकारी वर्णन इस जीवनी में है। मूल्य १) एक रुपया।

स्वाधीनता के पुजारी--साइबेरिया की मरुभूमि में निर्वासित रूसी देशभक्तों की हृदय दहलानेवाली कष्ट कथाओं का वर्णन। मूल्य १।) सवा रुपया।

गुलामी का नशा--असहयोग की अग्नि में देशभक्तों के आत्म-बलिदान और सरकारी अफ़सरों के पाशविक प्रहारों का नाटक के रूप में वर्णन है। मूल्य ।≡) सात आने।

देशभक्त मेक्स्विनी--अँगरेज़ों के जेलख़ाने में ७३ दिन के उपवास के बाद प्राण त्यागने वाले आइरिश वीर का जीवन-चरित्र है। मूल्य ।) चार आने।

तपस्विनी पार्वती देवी की जेल कहानी--जेल में स्त्रियों पर कैसा पाशविक अत्याचार होता है, यही मार्मिक भाषा में वर्णन किया गया है। मूल्य ≡) तीन आने।

गोराचाम कालेकाम--यूरोपियनों द्वारा काली जातियों पर किये गये अत्याचारों का रोमाञ्चकारी वर्णन। मूल्य १) एक रु०

प्रकाश पुस्तकालय, कानपुर

उपहार देने योग्य हमारा चित्रमय साहित्य।

वन्देमातरम् चित्रावली

१३ बहुवर्ण बड़े चित्र ! रेशमी सचित्र जिल्द !

इस अलबम में राष्ट्र को फड़का देनेवाले वन्देमातरम् गीत के एक एक पद पर एक एक रंगीन चित्र दिया गया है। मूल वन्देमातरम्, तपस्वी अरविन्द कृत अँगरेज़ी पद्यात्मक अनुवाद, उसका रोमन उल्था और उसके सामने आर्ट पेपर पर छपे बहुवर्ण चित्र हैं। आकार बड़ा। मूल्य २) दो रुपये।

व्यंगचित्रावली ।

१०२ व्यंग चित्र ! रंगीन छपाई !

इसमें दिल को हिला देनेवाले तथा हँसी से लोट पोट कर देनेवाले सौ से अधिक चित्र हैं। सभी कार्टून प्रसिद्ध चित्रकारों के बनाये हैं। इस समय हिन्दी साहित्य में इस ढंग की एक भी चित्र-पुस्तक नहीं है। सभी कार्टून शिक्षाप्रद हैं। मूल्य २) दो रुपये।

तिलक चित्रावली ।

लगभग ६५ चित्र ! मूल्य १) एक रुपया !

लोकमान्य तिलक के लगभग ६५ भिन्न भिन्न अवस्थाओं और अवसरों के चित्र हैं। इसे यदि हम चित्रमय जीवनी कहें तो अनुचित न होगा। लोकमान्य का समस्त जीवन बायस्कोप की भांति इसके देखतेही सामने आ जाता है।

प्रकाश पुस्तकालय, कानपुर